राजस्थान पत्रिका
संस्थापक
कर्पूर चन्द्र कुलिश

खौफजदा आधी आबादी

बलात्कार के मामलों में सतत जागरूकता, निगरानी और सख्ती न सरकार की कार्य प्रणाली का हिस्सा बन सकी है, न ही जनता की जीवन शैली का।

हैदराबाद में पशु चिकित्सक के साथ सामूहिक बलात्कार और उसे जिंदा जला दिए जाने के कांड को लेकर संसद से सड़कों तक अक्रोश का लावा उसी तरह उबल रहा है जैसा सात साल पहले दिल्ली के निर्भया कांड को लेकर उबला था। संसद के दोनों सदनों में सोमवार को इस कांड पर क्षोभ व चिंता का इजहार किया गया। लोकसभा में रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने इस वारदात को पूरे देश को शर्मसार करने वाली बताया तो राज्यसभा में समाजवादी पार्टी की सांसद जया बच्चन ने मांग कर डाली कि इस कांड के दोषियों को भीड़ के हवाले कर देना चाहिए। विडम्बना यह है कि इस तरह के कांड पर आक्रोश, क्षोभ व चिंता कुछ दिनों तक ही सुर्खियों में रहते हैं। फिर अगले कांड तक सब कुछ भुला दिया जाता है। ऐसे मामलों में सतत् जागरूकता, निगरानी और सख्ती न सरकार की कार्य प्रणाली का हिस्सा बन सकी है, न ही जनता की जीवन शैली का। वर्ना क्या वजह है कि निर्भया कांड के बाद बलात्कार के कानूनी प्रावधान और कड़े किए जाने के बावजूद इस तरह के मामलों पर कोई अंकुश नहीं लग पाया है बल्कि और बढ़ गए हैं। कभी रांची में छात्रा से सामूहिक बलात्कार होता है, कभी कठुआ कांड सामने आता है तो कभी सूरत में एक के बाद एक कई मासूम बच्चियां बलात्कार का शिकार होती हैं। निर्भया कांड के बाद 2013 में तत्कालीन केंद्र सरकार ने 100 करोड़ रुपए का निर्भया फंड बनाने का ऐलान किया था। यह फंड अब 300 करोड़ रुपए का हो गया है लेकिन इसके जरिए देश में महिलाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के जो वादे किए गए थे, अब तक पूरे नहीं हो पाए हैं।

न तो महिलाओं के लिए हेल्पलाइन सुचारू हैं, न तमाम सार्वजनिक जगहों पर सीसीटीवी कैमरे लग पाए हैं और न बसों में कमांडो तैनात किए जा सके हैं। इससे साफ हो जाता है कि महिलाओं की सुरक्षा के प्रति सरकार कितना गंभीर है। हाल ही एक सर्वे में बताया गया था कि देश के कई शहरों की महिलाएं अपनी सुरक्षा को लेकर खौफजदा रहती हैं। इस सर्वे के मुताबिक जोधपुर, भोपाल व ग्वालियर जैसे शहरों की 90 फीसदी महिलाओं को सुनसान इलाकों से गुजरने में डर लगता है। दुनिया को 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' का मंत्र देने वाले देश में महिलाएं डर के साए में जी रही हैं तो यह न सिर्फ देश बल्कि सभ्यता के लिए भी बेहद शर्मनाक है। दरअसल, बलात्कार के बढ़ते मामलों पर अंकुश के लिए महिलाओं की माकूल सुरक्षा व त्वरित न्याय के साथ सामाजिक मोर्चे पर भी सकारात्मक कदम उठाए जाने की जरूरत है। महिलाओं को बराबरी के दर्जे के दावे तो खूब किए जाते हैं, लेकिन ऐसे सामंती पुरुष आज भी समाज पर हावी हैं, जो महिलाओं को या तो उपभोग या श्रम का साधन मानते हैं। यह सामंती सोच महिलाओं के सम्मान और सुरक्षा के रास्ते की सबसे बड़ी दीवार है। यह दीवार जितनी जल्दी ढहा दी जाएगी, सभ्यता का उतना ही भला होगा।

Quote of the day

कांग्रेस के समय 2006 से 2009 की महंगाई दर के आंकड़े 22% हो गए थे। आज 2016 से 2019 के आंकड़े उठाएं तो महंगाई दर 12% है। ऐसे में जब महंगाई कम होती है तो स्वाभाविक तौर पर जीडीपी पर इसका असर होता है।

मनोहर लाल खट्टर, मुख्यमंत्री हरियाणा

प्रसंगवश

मिलीभगत का खेल

राजस्थान के कारागृहों में सुरक्षा और निगरानी व्यवस्था राम भरोसे हैं। जेलों में कैदियों के पास सभी प्रतिबंधित सामग्री बेधड़क पहुंच रही है। जेलों में क्राइम रैकेट चल रहे हैं और अपराधी मोबाइल के जरिए बाहरी दुनिया में अपने सम्पर्कों से जुड़े रहकर अपराधों की साजिशें रच रहे हैं, वसूलियां कर रहे हैं। सामान्य श्रेणी की जेलों की ही नहीं बल्कि हाई सिक्योरिटी जेल की सुरक्षा में भी सुराख हैं। ताजा मामला बांसवाड़ा के जिला कारागृह का सामने आया है, जहां पुलिस अधीक्षक ने अचानक निरीक्षण किया तो हार्डकोर अपराधियों और विचाराधीन बदियों के पास मोबाइल, सिम, चार्जर, महंगे ब्राण्ड की सिगरेट-बीड़ी के अलावा गांजा तक बरामद हुआ। हार्डकोर अपराधियों के जेल में रहकर बड़ी वारदात की साजिश रचने और बाहर अपने गुर्गों की मदद से वसूलियों के खेल का भी खुलासा हुआ। इसके बाद इन हार्डकोर अपराधियों को अलग-अलग जेलों में स्थानांतरित करने का भी निर्णय लिया गया।

कुछ समय पूर्व उदयपुर के जेल में भी चौदह मोबाइल बरामद हुए थे। प्रदेश के अन्य जेलों में भी ऐसे ही हालात सामने आते रहे हैं। जेल की चारदीवारी में कैदियों पर निगरानी इतनी लुंजपुंज है तो बाहर की दुनिया में उनकी गतिविधियों पर अंकुश को लेकर कोई भी उम्मीद करना ही बेमानी है। दो साल पूर्व प्रदेश के सात जेलों में करीब बीस करोड़ की लागत से जैमर लगाए गए लेकिन ये जैमर केवल खिलौने बनकर रह गए है। जेलों में कैदियों तक प्रतिबंधित सामग्री पहुंचना कार्मिकों की मिलीभगत के बिना बिल्कुल भी संभव नहीं है। इसके अलावा जेलों में स्टाफ का टोटा भी कहीं न कहीं समस्या को लगातार बढ़ा रहा है। जेलों की सुरक्षा में ये सुरखा जितनी जल्दी भर जाएंगे उतना ही अच्छा रहेगा। जैमर कारगर तरीके से काम करें इसके लिए प्रयास तत्काल शुरू होने चाहिए। मिलीभगत के खेल में लिप्त कार्मिकों की पहचान करके उन्हें व्यवस्था से बाहर का रास्ता दिखाने की भी जरूरत है तभी राज्य की जेलों की सुरक्षा उचित रह पाएगी।

हमसे ऐसे जुड़ें

प्रकाशित सामग्री पर आपकी राय व विषय चयन के सुझाव हमें भेजें
@PatrikaNews edit@epatrika.com

कृष्ण ही ब्रह्माण्ड रूपी अश्वत्थ हैं और सभी प्राणी उसके फल-फूल-पत्ते हैं। सम्पूर्ण विश्व एक-दूसरे भाग का अभिन्न अंग है। कोई किसी से अलग किया भी नहीं जा सकता। सबको अपने-अपने हिस्से का पोषण भी स्वतः ही मिलता रहता है।

ब्रह्म और कर्म

गुलाब कोठारी

प्रधान संपादक
पत्रिका समूह

अमृत और मृत्यु मन के ही व्यापार हैं। मन विचित्र संस्था है। अनंत रूप हैं मन के। चंचल भी है। न अतीत में टिकता है, न अनागत में। वर्तमान को तो छूता तक नहीं है। तब मन स्वयं अपने स्वरूप को भी नहीं जान पाता। यही अर्जुन की मनःस्थिति थी। इस स्थिति से उबरने के लिए गीता बन गई। लक्ष्य तो अर्जुन को जाग्रत करना ही था। उसे स्वरूप को स्पष्ट करना ही था कि 'तू कौन है।' यही जीवन का प्रथम और अन्तिम प्रश्न होता है। जब तब उत्तर नहीं मिलता, माया भ्रमित करती रहती है। जब उत्तर मिल जाता है, तब प्रश्नकर्ता स्वयं शेष नहीं रहता।

गीता एक ओर सृष्टि के स्वरूप की विस्तृत व्याख्या करती है, वहीं दूसरी ओर व्यक्ति और प्रकृति के समन्वय, एकरूपता को सिद्ध करती है। कृष्ण कहते हैं-'ममैवांशो जीवलोके' और यह भी कहते हैं कि-'देहानां हृद्देशे तिष्ठति।' दो बातें क्या एक ही अर्थ रखती हैं? जीव आत्मा का अंग है। आत्मा का ही दूसरा अंश ईश्वर है। इन्हीं को द्वासुपर्णा कहा है। ईश्वर और जीव दोनों ही वैश्-वानर-विराट् संस्था से निर्मित होते हैं। वैश्वानर भी कृष्ण ही हैं-'अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहामाश्रितः।'

हृदय भिन्न संस्था है। किसी भी वस्तु या प्राणी की आकृति से पूर्व उसका केन्द्र (ऋक्) ही बनता है, आकृति परिधि कहलाती है। केन्द्र ही उक्थ है। उसी को ऋग् भी कहते हैं। परिधि साम तथा मध्य क्षेत्र यजुः कहलाता है। केन्द्र को हृदय कहा गया है। यह अक्षर प्राण, ब्रह्मा-विष्णु-इन्द्र की समष्टि है। हृदय से परिधि पर्यन्त होने वाली प्राणों की गति-आगति ही वस्तु की स्वरूप स्थिति को व्यवस्थित रखती है। इसी हृदय में अव्यय पुरुष की पांचों कलाएं-आनंद, विज्ञान, मन, प्राण, वाक् की स्थिति रहती है। ये प्राण ही हृदय रूप में विस्तार पाते हैं। प्राण ही अक्षर सृष्टि है। वाक् से क्षर सृष्टि का निर्माण होता है। अक्षर सृष्टि की ब्रह्मा-विष्णु-इन्द्र इन तीनों कलाओं तथा अग्नि-सोम मिलकर आगे की सृष्टि का निर्माण करते हैं।

इस हृदय के केन्द्र में कृष्ण हैं। ब्रह्मा एवं इन्द्र के साथ विष्णु हैं। वैसे तो ब्रह्मा के जनक भी विष्णु हैं। अक्षर सृष्टि कारण है, क्षर भाग स्थूल सृष्टि है। प्रत्येक स्थूल के हृदय में कारण रूप कृष्ण हैं। तब एक ही प्रश्न पैदा होता है कि 'मैं' कौन हूं। इसका उत्तर भी एक ही है-'मैं' ही कृष्ण हूं। अहं ब्रह्मास्मि। अर्जुन ने गीता सुनी, कृष्ण को समझा और कृष्ण को अपने भीतर ही पा लिया। अर्थात् स्वयं कृष्ण ही हो गया। इसका मूल अर्थ हुआ कि ब्रह्माण्ड का प्रत्येक प्राणी ही कृष्ण है। जैसा कि कृष्ण ने कहा-'मैं अर्जुन हूं', वैसे ही कहा कि मैं 'वासुदेव' हूं। सम्पूर्ण सृष्टि के केन्द्र में कृष्ण का होना प्रमाणित हो जाता है। कृष्ण ही ब्रह्माण्ड रूपी अश्वत्थ हैं और सभी प्राणी उसके फल-फूल-पत्ते हैं। सम्पूर्ण विश्व एक-दूसरे भाग का अभिन्न अंग है। कोई किसी से अलग किया भी नहीं जा सकता। सबको अपने-अपने हिस्से का पोषण भी स्वतः ही मिलता रहता है। न संघर्ष करना पड़ता है, न ही कुछ करना होता है। हर पत्ते का स्वरूप व्यवस्थित बना रहता है।

कोई भी पेड़ अपना मूल खोजे तो उसका बीज पीछे के किसी पेड़ से आया होगा। इसी तरह पीछे से पीछे चले तो परमात्मा तक पहुंच जाएंगे। क्योंकि सभी का आत्मा षोडशी है। पंचकोशात्मक है। स्थूल भी है, सूक्ष्म भी है। दोनों की स्वतंत्र वृत्तियां भी हैं और संहित भाव में भी हैं। सूक्ष्म चेतना भाग कूटस्थ है, हृदय रूप है, अक्षर प्राण है। मूल में अक्षर सृष्टि ही सेतु है अमृत और मर्त्य लोकों के मध्य का। इसीलिए सूर्य मंत्र में 'निवेशयन्न मृतं मर्त्यंच' आता है। सूर्य हमारा आत्मा है। सूर्य से ही वैश्वानर अग्नि का अस्तित्व है। इसी विराट् अग्नि से ईश्वर और जीव संस्था का निर्माण होता है। ये दोनों ही आत्मा के युगल रूप हैं। 'द्वासुपर्णा' हैं।

आत्मा का केन्द्र अव्यय पुरुष है। अव्यय मन ही सृष्टि का केन्द्र है, कृष्ण है। श्वोवसीयस मन कहलाता है। जब मुक्ति साक्षी होता है मन, तब माया के बन्धन खुलते जाते हैं। जो कृष्ण स्वयं को अव्यय कह रहे हैं, वे भी 'पुर' के मायाभाव का संकोच दूर होते ही 'परात्पर' रूप हो जाते हैं।

आत्मा का केन्द्र अव्यय पुरुष है। अव्यय मन ही सृष्टि का केन्द्र है, कृष्ण है। श्वोवसीयस मन कहलाता है। जब मुक्ति साक्षी होता है मन, तब माया के बन्धन खुलते जाते हैं। जो कृष्ण स्वयं को अव्यय कह रहे हैं, वे भी 'पुर' के मायाभाव का संकोच दूर होते ही 'परात्पर' रूप हो जाते हैं। ब्रह्म अलग, माया अलग। यहां परात्पर अद्वैत कहलाता है। दो नहीं, किन्तु दो के संदर्भ में एक है। जब माया भी सुप्त हो जाए तो निर्विशेष रूप में 'अद्वय' दो नहीं हो जाता है। अहं ब्रह्मास्मि भी यहां लीन हो गया। अष्टावक्र कहते हैं-'स्वस्वरूपेऽहमद्वये।' अपने ही स्वरूप में। जहां सृष्टिपूर्ण था, पूर्ण महासमुद्र में। अर्थात् स्थूल से अतिसूक्ष्म तक की सारी स्थितियां हमारे अस्तित्त्व से जुड़ी हैं। प्रत्येक कर्म के स्वरूप के अनुसार इनका अनुभव होता रहता है। कर्ताभाव अलग, अकर्म अलग, समर्पण भिन्न, विद्या और अविद्या का प्रभाव बदलता रहता है।

अमृत और मृत्यु मन के ही व्यापार हैं। मन विचित्र संस्था है। अनंत रूप हैं मन के। चंचल भी है। न अतीत में टिकता है, न अनागत में। वर्तमान को तो छूता तक नहीं है। तब मन स्वयं अपने स्वरूप को भी नहीं जान पाता। यही अर्जुन की मनःस्थिति थी। इस स्थिति से उबरने के लिए गीता बन गई। लक्ष्य तो अर्जुन को जाग्रत करना ही था। उसे स्वरूप को स्पष्ट करना ही था कि 'तू कौन है।' यही जीवन का प्रथम और अन्तिम प्रश्न होता है। जब तब उत्तर नहीं मिलता, माया भ्रमित करती रहती है। जब उत्तर मिल जाता है, तब प्रश्नकर्ता स्वयं शेष नहीं रहता।

जीवन का सारा द्वन्द्व यही है। कामना ही चलाती है जीवन को। एक कामना होती है ईश्वर की तथा दूसरी कामना जीव की होती है। दोनों की दिशाएं भी भिन्न होती हैं। ईश्वर प्रकृति के सहारे कार्य करता है। उसका अपना एक तंत्र है, नियम है, कर्मानुरूप फल हैं। प्रकृति देश-काल से पार है। व्यक्ति जो करता है, वह अविद्या के वश रहता है। अविद्या, अस्मिता, राग-द्वेष, अभि-निवेश में व्यक्ति का मिथ्या दृष्टि का आधार अधिक बलवान होता है। उसका अहंकार परि-स्थितियों को स्वीकार करने नहीं देता। प्रकृति को एक के बाद दूसरी चुनौती देता रहता है। विद्या-धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य-अविद्या के आगे निर्बल हो जाते हैं। उसका कर्ता भाव, फलाशक्ति हावी रहते हैं। यही विषाद का हेतु है। अपेक्षा जब पूर्ण नहीं होती, तब विषाद होता है। विषाद की निरन्तरता ही अवसाद बन जाती है।

जीवन का मूल टकराव अविद्या के कारण ही होता है। कृष्ण कह रहे हैं-'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।' कर्म का अधिकार व्यक्ति का है, कर्म फल भोगने का अधिकार भी उसका है। फल क्या होगा तथा कब आएगा, यह प्रकृति के साथ (तंत्र में) चलता है। इसीलिए तो व्यक्ति को बार-बार जन्म लेना पड़ता है। जब फल मेरे नियंत्रण में नहीं है, जैसे भविष्य मेरे नियंत्रण में नहीं है, तब मुझे उसकी प्रतीक्षा क्यों करनी चाहिए? अपेक्षा क्यों रखनी चाहिए?

एक महत्वपूर्ण बात कृष्ण ने कह दी है-'ममैवांशो जीवलोके...।' कौन कह सकता है यह बात! वासुदेव कृष्ण नहीं कह सकते। त्रेतायुग में अष्टावक्र ने भी नहीं कही। केवल परात्पर ही यह घोषणा कर सकता है। वही अव्यय पुरुष के केन्द्र में बैठा है। वही सबका आत्मा बनता है। आत्मा के भी दो धातु हैं-ब्रह्म और जीव। कृष्ण यह भी कहते हैं-'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति' गीता 18.61 । तब यह भी निश्चित हो गया कि ईश्वर और जीव, आत्मा के दोनों पक्ष कृष्ण ही हैं। वही साक्षी हैं, वहीं कर्ता और भोक्ता हैं। व्यक्ति स्वयं एक प्रतिबिम्ब मात्र है। माया का भ्रम जाल है। अव्यय पुरुष की कलाएं भी माया है। अक्षर और क्षर प्रकृति रूप ही हैं। प्रकृति में जो शेष बचा वही परात्पर पुरुष रूप में लीला करता है। कर्म उसके होने की अभिव्यक्ति है। कर्म भी पूर्ण हैं अतः विश्व भी पूर्ण अभिव्यक्ति है ब्रह्म की। कर्म रूप में कर्ता भी विश्व में उपलब्ध है और फल रूप भोग योनियां भी विश्व में समाहित हैं।

माया के आवरण अभ्यास से हटाए जा सकते हैं। अष्टावक्र इन अर्थों में कृष्ण से भी आगे की बात कह रहे हैं। वे कहते हैं-करने को कुछ है ही नहीं। साक्षी भाव मुक्ति है। यह जानने भर की देर है कि मुक्त ही हूं। बोध ही मुक्ति है। कृष्ण ने अर्जुन को प्रेरित किया 'स्व-स्वरूप' में प्रतिष्ठित करने को। समझ न पाया। विराट् स्वरूप प्रकट किया। अन्त में अर्जुन बनकर लड़ा। अपने भीतर बैठे कृष्ण तक फिर भी नहीं पहुंच पाया। कृष्ण बनकर-अद्वैत भाव में स्थित होकर नहीं किया युद्ध। अष्टावक्र ने जीव और ईश्वर का स्वरूप भीतर ही बताते हुए कहा-पुरुषार्थ मोक्ष तक जाता है। शुद्ध चैतन्य अवस्था मोक्ष के भी पार है।

'न स्वर्गो नैव नरको जीवन्मुक्तिर्न चैव हि।
बहुनात्र किमुक्तेन योगदृष्ट्या न किंचन ॥'
अष्टावक्र गीता 18-80

न स्वर्ग, न नर्क, न मोक्ष। तब क्या बचा? पुरुष का पुर भाव भी गया। माया की परिधि का द्वार खुला, परात्पर मुक्त हुआ-पुरुष ही नहीं बचा।

कृष्ण ठहर जाते हैं-'समर्पण' पर। 'मामेकं शरणं व्रज।' उसके बाद ईश्वर की इच्छा पर ही सारे कर्म होने दें। बन्द कर अपने अहंकार के प्रयास। तू क्षत्रिय है, युद्ध कर, स्वर्ग को जा अथवा अपयश भोगेगा। यही नर्क होगा। समर्पण होने पर वही होगा, जो मैंने तय कर लिया है। मैं इन सभी को मरा हुआ देख रहा हूं। तू मारेगा नहीं, मारने में निमित्त मात्र होगा। तेरा बीच में होना ही बाधा है। या तो तेरी कामना से कर्म होगा, या मेरी कामना प्रभावी होगी। तू मेरी कामना को समर्पित हो जा। सारा तेरा कर्म अकर्म (ब्रह्म) हो जाएगा। भीतर भी ब्रह्म और बाहर भी ब्रह्म। तू जान जाएगा कि कर्म ही धर्म है। कर्म ही ब्रह्म है। जैसे प्रत्येक तत्त्व अर्द्धनारीश्वर है, ब्रह्म भी है। सृष्टि का मूल प्राण-विष्णु रूपी अग्नि प्राण भी प्रसरण एवं संकुचन युक्त है। यह भी सत्य है कि जहां व्यक्ति कर्ता है, वहां ईश्वर नहीं है। व्यक्ति हटा और ईश्वर प्रकट हुआ। **(समाप्त)**

gulabkothari.wordpress.com

लाखों रोजगार सृजित करने वाली महत्वाकांक्षी प्रधानमंत्री मुद्रा योजना में जल्द करने होंगे सुधार

बैंकों के गले की फांस बनता मुद्रा ऋण

सतीश सिंह
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की पत्रिका 'आर्थिक दर्पण' के संपादक

प्रधानमंत्री मुद्रा योजना में बढ़ते गैर निष्पादित आस्ति (एनपीए) या फंसे कर्ज को लेकर भारतीय रिजर्व बैंक के डिप्टी गवर्नर एम.के. जैन ने चिंता जताई है। जैन के अनुसार मुद्रा कर्ज से इसके लाभार्थी गरीबी रेखा से बाहर आ रहे हैं पर चिंता की बात यह है कि मुद्रा कर्ज में एनपीए का स्तर लगातार बढ़ रहा है।

उनके मुताबिक बैंकों को मुद्रा कर्ज की मंजूरी के स्तर पर प्रस्तावित लाभार्थी की पुनर्भुगतान क्षमता पर ध्यान देने की जरूरत है साथ ही साथ कर्ज की पूरी अवधि के दौरान ज्यादा नजदीकी से लाभार्थी की आर्थिक गतिविधियों पर नजर रखने की जरूरत है। जुलाई में सभी सरकारी बैंकों के प्रमुखों के साथ बैठक में रिजर्व बैंक के गवर्नर शक्तिकांत दास ने तो बंधन मुक्त कर्ज में बढ़ते एनपीए को लेकर नाराजगी जताई थी। रिजर्व बैंक के मुताबिक मुद्रा योजना के तहत दिए कर्ज इसी रफ्तार से एनपीए में तब्दील होते रहे तो बैंकिंग व्यवस्था व अर्थव्यवस्था को बड़ा नुकसान हो सकता है।

मुद्रा ऋण स्थिति में बदलाव के लिए जल्द ही सकारात्मक कदम उठाने होंगे वरना मुद्रा योजना अन्य सरकारी योजनाओं की तरह अपने मकसद को हासिल करने में नाकाम रहेगी

मुद्रा योजना के अंतर्गत मार्च 2018 से मार्च 2019 के दौरान एनपीए बढ़ने की गति दोगुनी से भी अधिक हो गई है। यही नहीं, मुद्रा कर्ज में 2313 मामले धोखाधड़ी के भी रिपोर्ट हुए हैं। मुद्रा योजना को मोदी सरकार की प्रमुख योजनाओं में से एक माना जा रहा है क्योंकि इससे असंगठित क्षेत्र में हर साल लाखों रोजगार सृजित हो रहे हैं। इसका आगाज अप्रेल, 2015 में किया गया था। इसके तहत छोटे कारोबारियों को 10 लाख रुपए तक का कर्ज बिना जमानत के दिया जाता है। मुद्रा कर्ज की ब्याज दरें अन्य कर्जों के मुकाबले कम हैं। यह लघु और छोटे कारोबारियों के लिए अपने कारोबार को बढ़ाने या कारोबार शुरू करने के लिए सबसे उपयुक्त योजना मानी जा रही है।

क्या है मुद्रा योजना

प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के तहत लघु, कुटीर व मध्यम स्तर के उद्यमियों को सस्ती दरों पर बिना गारंटी कर्ज उपलब्ध कराने व किसी भी बैंक या गैर बैंकिग वित्तीय कंपनियों से 10 लाख रुपए तक के कर्ज मुहैया कराए जाते हैं। इसे तीन वर्गों में बांटा गया है।

- **शिशु** : इसके तहत 50 हजार रुपए तक के कर्ज दिए जाते हैं।
- **किशोर** : इसके तहत 50 हजार से 5 लाख रुपए तक के कर्ज दिए जाते हैं।
- **तरुण** : इसके तहत 5 लाख से 10 लाख रुपए तक के कर्ज दिए जाते हैं।
- **पात्रता** : इस योजना का लाभ सभी प्रकार की कारोबारी इकाइयां, मशीन ऑपरेटर, पेशेवर जैसे डॉक्टर, इंजीनियर, सेवा क्षेत्र से जुड़े लोग, लघु एवं छोटे कारोबारी जैसे किराना स्टोर वाले, फल-सब्जी विक्रेता, रेहड़ी, हेयर कटिंग-ब्यूटी पार्लर वाले, शिल्पकार, बाइक रिपेयर करने वाले आदि उठा सकते हैं।

एनपीए में तेज बढ़ोतरी

चूंकि, प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के तहत 10 लाख रुपए तक का कर्ज बिना गारंटी दिए जाते हैं। इससे अधिकतर लाभार्थी कर्ज लेने के बाद उसे लौटाने से बचते हैं। वर्ष 2018 तक मुद्रा योजना के तहत कर्ज पुनर्भुगतान का प्रदर्शन काफी अच्छा रहा। वित्त वर्ष 2017-18 मुद्रा योजना में एनपीए 5.38 % रहा, जो दूसरे क्षेत्रों के कर्ज के मुकाबले बहुत ही कम था पर वित्त वर्ष 2019 में इस अनुपात में बढ़ोतरी देखी गई।

वित्त वर्ष 2019 के 9 माह में 2018 के 9 माह के मुकाबले एनपीए 53% बढ़ गया। मुद्रा योजना के तहत दिए गए तीनों वर्गों शिशु, किशोर और तरुण के अंतर्गत कर्ज में वित्त वर्ष 2018 के मुकाबले 2019 में क्रमशः 64, 52 और 42 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वित्त वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में एनपीए बढ़कर क्रमशः 58.33, 70 और 45 फीसदी हो गए। इसी तरह 31 मार्च, 2018 मुद्रा योजना के तहत एनपीए खाते 17.99 लाख थे, जो 31 दिसंबर, 2018 तक बढ़कर 28.83 लाख हो गए। निजी क्षेत्र के बैंक, जो एनपीए को आमतौर पर अब तक कम करने में कामयाब रहे हैं, भी मुद्रा योजना के तहत दिए गए कर्ज के मामले में सरकारी बैंकों के समान फिसड्डी साबित हुए हैं।

ऋणियों का पुनर्भुगतान से परहेज

इस योजना के तहत वितरित कर्ज एनपीए होने पर निश्चित राशि का भुगतान सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम मंत्रालय, भारत सरकार व सिडबी द्वारा किया जाएगा। इसके लिए क्रेडिट गारंटी फंड ट्रस्ट माइक्रो एंड स्मॉल इंटरप्राइजेज (सीजीटीएमएसएमई) की स्थापना की गई जो सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों को संपार्श्विक प्रतिभूति (कोलेट्रल सिक्युरिटी) के बंधन से मुक्त करने के लिए की गई थी, ताकि कर्ज प्रवाह में वृद्धि हो सके। पर, जिस मकसद से मुद्रा योजना शुरू की गई थी, वह विफल हो रही है।

अधिकतर लोग मुद्रा योजना के तहत कर्ज लेकर उसका पुनर्भुगतान नहीं कर रहे हैं। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना के तहत वितरित कर्ज को सीजीटीएमएसएमई का कवर मिलने से लाभार्थी कर्ज की किस्त का पुनर्भुगतान और ब्याज देने से परहेज करने लगे हैं।

पाठकपीठ

सदन में हाजिर रहें सांसद

लोकसभा में बड़ी संख्या में सांसदों की गैर हाजिरी चिंतन का विषय है। अच्छा वेतन-भत्ता मिलने के बावजूद सांसदों का वहां मौजूद ना रहना उनकी उदासीनता को उजागर करता है जबकि उन्हें सदन के सभी सत्रों में मौजूद रहकर महत्त्वपूर्ण विषयों में अपनी सहभागिता निभाकर देश की उन्नति के लिए कार्य करना चाहिए। सांसदों से देश को बहुत उम्मीदें हैं, इसलिए उन्हें सदन में अपनी उपस्थिति हर हाल में दर्ज कराने का प्रयास करना चाहिए।
— शिरीष सकलेचा, मध्य प्रदेश

सजा ऐसी हो कि कांप उठे रूह

देश में सड़क से लेकर संसद तक एक ही आवाज उठ रही है- अब और नहीं। आवाज तो तब भी उठी थी, प्रदर्शन तो तब भी हुए थे जब निर्भया हैवानियत का शिकार हुई। हुक्मरानों से कहना चाहते हैं कि मुआवजा व संवेदना की नहीं, सख्त सजा प्रक्रिया अपनाने की जरूरत है। कानून बनाने से अधिक कानून का सख्ती से क्रियान्वयन होना जरूरी है। सजा ऐसी हो जिससे रूह कांपने लगे, तभी ऐसी घटनाओं पर लगाम लग सकेगी।
— शिवानी सिंह चौहान, बाड़मेर

बोली बचाने के लिए हो पहल

बोलियों को बचाने की पहल की जानी चाहिए। कोई भी बोली हो, वह व्यवहार में लाने से ही जिंदा रहेगी। कई जगहों पर स्थानीय बोली बोलने का प्रतिशत कम होता दिखाई देने लगा है। कई बार क्षेत्रीय बोली खड़ी भाषा के संग मिश्रित हो जाती है। क्षेत्रीय बोली जहां उचित हो, वहां पर अवश्य बोली जाए। अगर हम अपनी बोली को तवज्जो नहीं देंगे तो धीरे-धीरे क्षेत्रीय बोलियां हमसे ही दूर हो जाएंगी।
—संजय वर्मा, मनावर, धार

अब और बर्दाश्त नहीं कर सकते

बलात्कार की घटनाओं को अब और सहन नहीं किया जा सकता। सरकार को इस संबंध में कठोर कानून बनाने होंगे। हैदराबाद, रांची जैसी बलात्कार की घटनाएं कब तक बर्दाश्त करते रहेंगे? ऐसे अपराधों की सुनवाई हाईकोर्ट जज की एक विशेष अदालत द्वारा ही होनी चाहिए। मामले में निरंतर सुनवाई हो और फैसले के बाद अपीलों का कोई प्रावधान नहीं होना चाहिए। तभी हम समाज में ऐसे दरिंदों को पनपने से रोक सकेंगे।
— सुशीला भंडारी, जोधपुर

बेटियां बनें आत्मरक्षा में सक्षम

एक तरफ सरकार प्रचार करती है 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ', दूसरी तरफ बेटियां जुल्म से कराह रही हैं। लचीली कानून प्रणाली और भ्रष्टाचार के चलते वहशी दरिंदे बैखौफ नापाक करतूतों को अंजाम दे रहे हैं। अब द्रोपदी को बचाने के लिए कृष्ण नहीं आएंगे। अब तो स्वयं नारी को ही चण्डी, दुर्गा का रूप धरना होगा। वक्त का तकाजा है कि गांवों, शहरों और जिलों में बेटियों को 'सेल्फ डिफेंस' की शिक्षा देनी चाहिए।
— मंगलचंद प्रजापति, मेड़ता सिटी

सजा के लिए उचित सुझाव है

हैदराबाद में वेटरनरी डॉक्टर का गैंगरेप और हत्या की घटना के बाद सड़क से लेकर संसद तक भूचाल आ गया है। डीएमके सांसद पी विल्सन ने बलात्कारियों को जेल से बाहर निकलने से पहले नपुंसक बनाने की बात कही है। यह सबसे अच्छा सुझाव है। बलात्कारी को दोषी पाए जाने के बाद फांसी पर लटकाने की बजाय जिंदगी भर के लिए नपुंसक बना देंगे तो अन्य लोगों को भी इससे सबक मिलेगा।
— हेमा हरि उपाध्याय, उज्जैन, मध्य प्रदेश

SohanJani

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 247

नियमों के बिना दुनिया

अमेरिका में राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के अधीन मौजूदा सत्ता प्रतिष्ठान विश्व व्यापार व्यवस्था को कमजोर करने के मामले में अब तक के सबसे कट्टर प्रतिष्ठानों में से एक साबित हुआ है। खासतौर पर विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) की अपील संस्था के मामले में। अगर डब्ल्यूटीओ का कोई सदस्य दूसरे सदस्य के व्यापारिक नियमों के उल्लंघन के मामले में अपील करता है तो उसकी सुनवाई सात न्यायाधीशों द्वारा की जानी चाहिए। परंतु अमेरिका ने इस अदालत में नई नियुक्तियों को बाधित किया हुआ है। यह प्रक्रिया ट्रंप के कार्यकाल से पहले की है लेकिन उनके कार्यकाल में इसे बढ़ावा मिला है। इस महीने शायद अदालत की कार्यवाही न हो सके क्योंकि पर्याप्त लोग मौजूद नहीं हैं। अंतिम तीन न्यायाधीशों में से दो सेवानिवृत्त होने वाले हैं और एक न्यायाधीश मामलों की सुनवाई नहीं कर सकता। इसका असर वैश्विक स्तर पर होगा। सन 1995 से अपील संस्था बड़ी परियोजनाओं पर केंद्रित रही है। यह सुनिश्चित करने के लिए विश्व व्यापार ऐसी अवस्था को न पहुंच जाए जहां अमेरिका और चीन जैसे बड़े देश अपनी मर्जी से नियम निर्माण पर न सहमत हों और छोटे देश अनुपालन करने को मजबूर न हो जाएं। ऐसे देश द्विपक्षीय व्यापारिक विवादों में जीत हासिल नहीं कर पाएंगे लेकिन उनके पास डब्ल्यूटीओ में आगे की राह निकालने का अवसर रहेगा। यही कारण है कि ट्रंप इस व्यवस्था की अवज्ञा कर रहे हैं।

भारत जैसा छोटा कारोबारी देश जो दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में से एक होने के बावजूद विश्व व्यापार में केवल दो फीसदी का हिस्सेदार है, उसके लिए उपरोक्त स्थिति किसी त्रासदी से कम नहीं होगी। भारत पहले ही अमेरिका के साथ एक कारोबारी विवाद में उलझा हुआ है। चीन भले ही नियम नहीं तोड़ रहा है लेकिन तमाम अन्य विकासशील देशों की तरह भारत को भी चीन के गैर बाजार आर्थिक झुकाव से अनेक शिकायतें हैं। भारत को भी कुछ आरोप साझा करना होगा, लेकिन उसने डब्ल्यूटीओ में चीन को पर्याप्त ढंग से नहीं रोका। बल्कि उसने चीन को लेकर जो व्यापारिक गतिरोध खड़े किए वे अमेरिका समेत अन्य देशों के साथ उसके विवाद की वजह बन गए। डब्ल्यूटीओ में गए मामलों को लेकर भारत की विधिक तैयारी भी कभी उच्चस्तरीय नहीं रही। यह भी सही है कि डब्ल्यूटीओ सुधार भी काफी समय से लंबित है। बहरहाल, जब तक ट्रंप की जगह कोई ऐसा व्यक्ति अमेरिकी राष्ट्रपति नहीं बनता जो कारोबारों के हित में हो तब तक अपील संस्था में सुधार की संभावना कम ही है। भारत को भी ऐसे वक्त की तैयारी रखनी होगी जहां नियम कायदे नहीं होंगे। इस व्यवस्था में भारत का नया पृथकतावाद विधिक कार्रवाई के बजाय प्रतिकार को उकसावा देगा।

ऐसे हालात में भारत का बहुपक्षीय या द्विपक्षीय नियमों से मुंह मोड़ना खासा संदेहास्पद है। उदाहरण के लिए उपरोक्त संदर्भ में भारत का क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (आरसेप) में शामिल नहीं होने का निर्णय अदूरदर्शी नजर आता है। यदि भारत चीन द्वारा व्यापार को विसंगतिपूर्ण करने को लेकर चिंतित होता तो कम से कम आरसेप विवादों को हल करने की एक व्यवस्था तो उसे मुहैया कराता जो शायद डब्ल्यूटीओ में लंबे समय तक उपलब्ध नहीं रह पाएगी। भारत को अब सक्रियता दिखाते हुए ऐसे अन्य उपाय अपनाने होंगे जिनकी मदद से वह व्यापार नीति के मसले पर वह अपनी आजादी सुनिश्चित कर पाए। परंतु इसे व्यापारिक मामलों में अंतर्मुखी होने के बचाव के तौर पर नहीं अपनाया जा सकता। भारत को अपने हित में अन्य उपाय तलाश करने होंगे, बजाय कि अपनी नीतियों में ऐसे बदलाव करने के जो देश की कंपनियों और कामगारों को ही नुकसान पहुंचाएं।

अजय मोहंती

महज परिधान नहीं एक चरित्र है वर्दी

पुलिसबल में तैनात कर्मचारियों की जरूरतों पर निर्णय-निर्माताओं को सावधानी से विचार करना चाहिए। अनुशासन की अहमियत और शिकायतों के प्रति रवैये पर रोशनी डाल रहे हैं **प्रेमवीर दास**

हाल के महीनों में ऐसी तीन घटनाएं हुई हैं जिन्होंने वर्दी के सवाल को केंद्र में ला खड़ा किया। इनमें से एक मौका कानून व्यवस्था बनाए रखने से जुड़ी दो एजेंसियों के बीच हुए अशोभनीय टकराव का है। इस विवाद के बाद दिल्ली पुलिस के सैकड़ों कर्मचारी अपने मुख्यालय के बाहर प्रदर्शन करने जा पहुंचे और उन्हें शांत कराने के इरादे से पहुंचे अपने ही आयुक्त से सवाल-जवाब करने लगे। हाल ही में हमने राज्यसभा के सभापति के दोनों तरफ खड़े मार्शल को थलसेना के जनरल से मिलती-जुलती वेशभूषा में खड़े हुए देखा। हालांकि इस पर सवाल उठने के बाद मार्शलों की वर्दी फिर से पुराने रूप में लाई जा चुकी है। अभी हाल ही में हमने यह भी देखा कि जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रदर्शनकारी छात्रों को पुलिस किस तरह लाठियां लेकर दौड़ा रही है। ये सारी घटनाएं वर्दी-पोशाक के सही मायने पर कुछ अहम सवाल खड़ी करती हैं।

भारत में तीन तरह की वर्दीधारी बल हैं- सेना, अर्द्धसैनिक बल और पुलिस। इनमें से हरेक बल की अपनी खासियत एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित जिम्मेदारियां हैं। सेना की बुनियादी जिम्मेदारी देश की क्षेत्रीय अखंडता को सुरक्षित रखना है जबकि अर्द्धसैनिक बल को सुरक्षा की दूसरी पंक्ति के तौर पर काम करने के साथ ही आंतरिक सुरक्षा का जिम्मा संभालना होता है। वहीं पुलिसबल का काम कानून व्यवस्था बनाए रखना है। साफ है कि सेना का आम लोगों से सीधा ताल्लुक सबसे कम होता है जबकि पुलिस का सबसे ज्यादा संपर्क होता है। इससे इन बलों पर पड़ने वाला दबाव भी तय होता है और उसमें पुलिस सबसे आगे होती है। लेकिन इन सभी बलों के दायित्वों के निर्वहन में एक बात समान है। भले ही व्यक्तिगत स्तर पर शिकायतें उठाई जा सकती हैं और हमेशा उन्हें सुना भी जाएगा, लेकिन सामूहिक विरोध प्रदर्शन तो अस्वीकार्य है।

भारत के आजाद होने के ऐन पहले 1946 में नौसेना का विद्रोह हुआ था जिसमें सैकड़ों नौसैनिकों ने अपनी बैरकों की घेराबंदी कर अपने अधिकारियों को कुछ समय के लिए बंधक बना लिया था। लेकिन बगावत का झंडा उठाने वाले नौसैनिकों पर जल्द ही काबू पा लिया गया और कई विद्रोहियों को या तो बर्खास्त कर दिया गया या फिर उनके खिलाफ अदालतों में मुकदमे चलाए गए। फिर 1968 में भी नौसेना की टोपास शाखा के नौसैनिकों ने सामूहिक प्रदर्शन किया। इस शाखा के नाविकों का काम जहाजों पर बने शौचालयों की सफाई करना था। ब्रिटिश काल में नौसेना की सभी शाखाओं के नौसैनिक यह काम समान रूप से करते थे। हमारे अधिकारियों को यह लगा कि अगर आजादी के बाद भी नौसेना में वही परंपरा जारी रहती है तो जहाजों पर मौजूद जगह का अधिकतम इस्तेमाल किया जा सकता है और इससे नौसैनिकों की संख्या भी बढ़ेगी। जब इस आशय का आदेश जारी किया गया तो नौसैनिकों ने सामूहिक रूप से इसकी अवहेलना की। बड़ी संख्या में नौसैनिकों ने शौचालयों की सफाई को कमतर मानते हुए ऐसा करने से मना कर दिया था। उनके व्यापक विरोध को देखते हुए यह आदेश वापस ले लिया गया लेकिन विरोध करने वाले अधिकतर नौसैनिकों को नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया।

इसके कुछ साल बाद 1973 में भी नौसेना के भीतर सीमित स्तर का एक और सामूहिक विरोध देखा गया। उस समय नौसेना के अग्रणी पोत आईएनएस मैसूर के सारे नौसैनिकों ने खाना खाने से इनकार कर दिया। उस समय आईएनएस मैसूर सफर पर निकला हुआ था और यह साफ नहीं था कि यह सामूहिक विरोध केवल स्थानीय है या इसका अधिक व्यापक रूप है। कमान मुख्यालय की जांच से पता चला कि यह विरोध केवल उसी जहाज तक सीमित है। जहाज के अधिकारियों के अलावा एडमिरल ने भी इस विरोध की वजह पता करने की कोशिश की लेकिन कुछ भी सामने नहीं आया। नौसैनिक अपना विरोध जताने के बाद शांति से अपने-अपने काम पर चले गए और रात का खाना भी खाया। बाद में इस घटना की जांचों से पता चला कि नौसैनिकों के बीच ऐसी धारणा पैठ कर गई थी कि उस जहाज के नए कप्तान अनुशासन पर कुछ ज्यादा ही जोर दे रहे हैं। इस शांतिपूर्ण विरोध की वजह चाहे जो भी रही हो, उसे नजरअंदाज नहीं किया गया और उकसाने या भड़काने के काम में किसी भी तरह से शामिल रहे सौ से अधिक नौसैनिकों को सेवामुक्त कर दिया गया।

वर्ष 1984 में अमृतसर के स्वर्ण मंदिर परिसर पर सैन्य कार्रवाई के बाद सेना के भीतर भी सामूहिक विरोध की एक घटना हुई थी। बिहार (अब झारखंड) के रामगढ़ कैंट में मौजूद रेजिमेंट की एक सैन्य टुकड़ी ने अचानक दिल्ली की तरफ कूच कर दिया था। लेकिन जल्द ही उन्हें रोका गया और वापस बैरकों में लाया गया। इस घटना में कोई हिंसा नहीं हुई थी लेकिन कूच करने वाले अधिकतर सैनिकों को या तो नौकरी से हटा दिया गया या दंडित किया गया। सैन्यबलों में सामूहिक विरोध की ये कुछ उजागर घटनाएं हैं। कुछ और घटनाएं भी रही होंगी जिनके बारे में अधिक पता नहीं है। असली बात यह है कि इन सभी घटनाओं में सैनिकों के सामूहिक विरोध को अस्वीकार्य आचरण माना गया और उसी हिसाब से उनसे निपटा भी गया। इस दौरान विरोध का कारण बनने वाले बिंदुओं को स्वीकार करने के साथ उन्हें सुधारा भी गया।

वर्दीधारियों के विरोध की हालिया घटनाओं को इसी संदर्भ में देखा जाना चाहिए। अन्य वर्दीधारी बलों की तुलना में आम नागरिकों के साथ करीबी संपर्क के मामले में पुलिस का काम बेहद जटिल एवं दुरुह है। इसके अलावा पुलिस के दायित्व भी एकदम अलग हैं। पुलिस के कुछ कदम अनावश्यक रूप से कठोर लग सकते हैं लेकिन इनसे बचा भी नहीं जा सकता है। भले ही आंदोलन के मुहाने पर खड़े प्रदर्शन का सामूहिक रवैया बहस का विषय हो सकता है लेकिन यह तय है कि सेना एवं अर्द्धसैनिक बलों के लिए तय मानदंड पुलिस पर नहीं लागू किए जा सकते हैं, लिहाजा कुछ अलग मानक तय करने होंगे। ऐसा भी नहीं है कि पुलिस के भीतर की शिकायत के सामने आने का यह पहला मौका है। तमाम सुधारात्मक कदम भी उठाए गए हैं। पुलिस सुधारों पर विस्तृत रिपोर्ट काफी समय से सार्वजनिक विमर्श के लिए उपलब्ध हैं लेकिन उन पर अमल नहीं किया गया है। पुलिस के कई पूर्व वरिष्ठ अधिकारियों ने इन सुझावों पर फौरन ध्यान देने की जरूरत बताई है। इस मामले में अगर आला अधिकारियों ने कुछ शुरुआती कदम उठाए होते तो मदद मिली होती। पुलिसबल में सेवारत कर्मचारियों के हितों की सुरक्षा के लिए जरूरी कदमों पर नीति-निर्माताओं को बहुत सावधानी से विचार करने की जरूरत है ताकि वे अपनी वर्दी के हिसाब से आचरण भी करें। इस प्रकरण में आईएएस और आईपीएस ऑफिसर एसोसिएशन की तरफ से जारी किए गए बयान गैरजरूरी होने के साथ ही वांछित परिणाम के लिहाज से भी मददगार नहीं हैं।

(लेखक नौसेना की पूर्वी कमान के पूर्व प्रमुख और राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बोर्ड के पूर्व सदस्य हैं)

दुनियाभर का बदलता श्रम बाजार आईटी क्षेत्र में कम होते रोजगार

इंसानी पहलू

श्यामल मजूमदार

इन्फोसिस के पूर्व मुख्य वित्तीय अधिकारी मोहनदास पई ने हाल ही में यह कहकर हलचल मचा दी कि देश के सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) उद्योग में 30,000 से 40,000 मझोले कर्मचारियों की नौकरी जा सकती है। हकीकत तो यह है कि इस उद्योग में आ रही परिपक्वता के बाद ऐसा आम हो जाएगा। पई फिलहाल मणिपाल ग्लोबल एजुकेशन सर्विसेज के चेयरमैन हैं। उनका यह कहना एकदम सही है क्योंकि जो लोग अपने वेतन के हिसाब से काम में उन्नयन नहीं कर रहे हैं उन्हें विकल्प तलाशने होंगे क्योंकि कंपनियों के पास लोगों की छंटनी करने और अपने आप को नए ढंग से समायोजित करने के अलावा विकल्प नहीं हैं।

हमें तकनीकी क्षेत्र की बेरोजगारी के लिए तैयार रहना होगा क्योंकि तकनीकी प्रगति कौशल, वेतन और रोजगार को गहराई से प्रभावित करेगी। उदाहरण के लिए कोडिंग संबंधी रोजगार आने वाले समय में तमाम आईटी कंपनियों में अप्रासंगिक होते जाएंगे। दुर्भाग्य तो यह है कि न तो मानव और न ही संगठन, तकनीक की दुनिया की गति से तालमेल बिठा पा रहे हैं। उदाहरण के लिए हर 18 महीने में कंप्यूटर प्रोसेसर की शक्ति दोगुनी हो जाती है जबकि हर पांच साल में ये 10 गुना तेज हो रहे हैं। तेज और सस्ते कंप्यूटर तथा कहीं अधिक 'समझदार' सॉफ्टवेयर मशीनों को वे क्षमताएं प्रदान कर रहे हैं जो एक वक्त इंसानों के पास होती थी। आवाज को समझना, एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करना और तय रुझानों को पहचानना इसका उदाहरण है।

अब जबकि यह उद्योग उच्च मूल्य सेवाएं देने पर केंद्रित हो रहा है तो आईटी कंपनियों का ध्यान भी अब बड़े आकार के बजाय छोटे लेकिन विशेषज्ञता वाले लोगों के समूह पर है। ऐसे लोग जिनके पास अपने-अपने क्षेत्र की विशेषज्ञता हो। आश्चर्य नहीं कि अब तक काम में आ रहे कॉल सेंटरों का स्थान अब सवाल जवाब वाली स्वचालित व्यवस्था ले रही है।

इन्फोसिस के पूर्व प्रबंध निदेशक विशाल सिक्का ने बहुत पहले इस खतरे के बारे में बात की थी। उन्होंने कहा था कि सबसे बड़ा खतरा स्वचालन और कृत्रिम मेधा से है जो आसानी से तकनीकी क्षेत्र के रोजगारों का स्थान ले सकती हैं। ऐसे में आगे बने रहने के लिए उन्हें मौजूदा तयशुदा काम के अलावा ग्राहकों के लिए मूल्यवर्धित काम करना होगा। सिक्का ने कहा था कि देश की सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियां अगर समस्या दूर करने वाली और कम लागत पर काम करने वाली कंपनियों के रूप में सीमित रहीं तो उनका बचे रहना मुश्किल होगा।

> कई अध्ययनों से पता चला है कि कृत्रिम मेधा की तकनीक अमेरिका में महज कुछ दशक के भीतर मौजूदा रोजगारों में से आधे पर कब्जा कर लेगी। यानी उत्पादन सबंधी पेशों में बहुत बड़ी तादाद में रोजगार समाप्त होंगे

कई अध्ययनों से पता चला है कि कृत्रिम मेधा की तकनीक अमेरिका में महज कुछ दशक के भीतर मौजूदा रोजगारों में से आधे पर कब्जा कर लेगी। यानी उत्पादन सबंधी पेशों में बहुत बड़ी तादाद में रोजगार समाप्त होंगे।

बॉस्टन कंसल्टिंग समूह का अनुमान है कि अमेरिका में प्रति घंटे एक इंसानी वेल्डर की सेवा लेना रोबोटिक वेल्डर की तुलना में तीन गुना तक महंगा पड़ सकता है। यानी कंपनियां रोजगार तो देंगी लेकिन केवल उनको जिनमें उच्चस्तरीय काम करने का कौशल हो। विश्व आर्थिक मंच ने 2018 में 'रोजगार का भविष्य' शीर्षक से अपनी रिपोर्ट में कहा था कि रिपोर्ट में शामिल 12 उद्योगों के कुल कार्य घंटों में से औसतन 71 फीसदी मनुष्यों द्वारा किए गए जबकि 29 फीसदी मशीन द्वारा। कहा गया कि सन 2022 तक यह औसत 58 फीसदी मनुष्य और 42 फीसदी मशीन में तब्दील हो जाएगा। उदाहरण के लिए सन 2022 तक किसी संस्थान में सूचना और डेटा प्रसंस्करण तथा सूचनाओं के खोज तथा पारेषण का 62 फीसदी काम मशीनों द्वारा किया जाएगा जबकि सन 2018 में यह प्रतिशत महज 46 था।

बहरहाल कई विशेषज्ञ कहते हैं कि ये आशंकाएं गलत हैं क्योंकि तकनीक के उन्नयन के साथ लोग काम के दोहराव से बचेंगे। जब भी तकनीक में अचानक कोई बड़ा परिवर्तन आता है तो ऐसी स्थिति बनती ही है। परंतु यह भी देखा गया है कि तथाकथित नुकसान उठाने वाले नए उद्योग में कहीं न कहीं अपनी जगह बना ही लेते हैं। यह बहस चलती रहेगी लेकिन सीधा तथ्य यह है कि रोजगार चाहने वालों को अपने कौशल उन्नयन पर जम कर काम करना होगा। विशेषज्ञों का कहना है कि सन 2022 तक वैश्विक श्रम शक्ति के आधे से अधिक को कौशल में भारी सुधार की आावश्यकता होगी। कौशल संपन्न नए स्थायी कर्मचारियों की नियुक्ति की संभावनाएं नया कौशल अपनाने में पीछे रह गए कर्मचारियों से तकरीबन दोगुनी हैं। जरा सोचिए भारत जैसे देशों पर इसका क्या असर होगा जहां एक करोड़ से अधिक लोग हर वर्ष रोजगार बाजार में शामिल होते हैं। विडंबना यह है कि एक ओर जहां देश की कंपनियों का आधा से अधिक शीर्ष प्रबंधन यह मानता है कि पारंपरिक रोजगार समाप्त हो जाएंगे, वहीं उनमें से एक चौथाई से भी कम ऐसे हैं जिन्होंने अपने संस्थानों में रोजगार उन्नयन या उनके स्वरूप में बदलाव के लिए कोई प्रयास किया है। जबकि यह लगभग अनिवार्य हो चुका है।

कानाफूसी

टकराव का परिणाम

मध्य प्रदेश के वन मंत्री उमंग सिंघार और अतिरिक्त मुख्य सचिव (वन) एपी श्रीवास्तव के बीच छिड़ा शीतयुद्ध विभाग के रोजमर्रा के कामकाज को प्रभावित कर रहा है। बीते एक महीने से अधिक समय में अधिकारियों की मेजों पर फाइलों का अंबार लग गया है। अधिकारियों की पदस्थापना और पदोन्नति से संबंधित फाइलें जस की तस अटकी हुई हैं। यह भी एक कारण है कि भारतीय वन सेवा के तमाम अधिकारी दूसरी जगह पदस्थापना की तलाश में हैं। करीब 16 अधिकारियों ने अन्य विभागों तथा केंद्र में प्रतिनियुक्ति का आवेदन कर दिया है। सिंघार और श्रीवास्तव के बीच के मतभेद उस समय सार्वजनिक हो गए जब मंत्री ने पिछली भाजपा सरकार के कार्यकाल में हुए कथित पौधरोपण घोटाले की जांच आर्थिक अपराध शाखा से कराने की अनुशंसा की थी। श्रीवास्तव इस बात से सहमत नहीं थे जिसके चलते दोनों में टकराव की स्थिति बन गई।

ट्विटर पर तकरार

कांग्रेस महासचिव प्रियंका गांधी वाड्रा और समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष अखिलेश यादव ने पिछले कुछ समय में उत्तर प्रदेश की सत्ताधारी भाजपा सरकार पर सोशल मीडिया साइट ट्विटर के माध्यम से जमकर हमले किए। इन हमलों से बौखलाई सरकार की ओर से जवाब देने का दायित्व संभाला उत्तर प्रदेश के उप मुख्यमंत्री केशव प्रसाद मौर्य ने। उन्होंने यहां तक कह डाला कि यादव और वाड्रा को अपना नाम बदलकर ट्विटर यादव और ट्विटर वाड्रा कर लेना चाहिए क्योंकि दोनों अपने राजनीतिक एजेंडा को आगे बढ़ाने का काम ट्विटर के माध्यम से ही करते हैं।

आपका पक्ष

महिला सुरक्षा पर संसद में चिंता

हाल में घटित सामूहिक दुष्कर्म की घटना ने देश को स्तब्ध कर दिया है जिस वजह से महिला सुरक्षा को लेकर देश भर में आक्रोश है। कई जगहों पर महिलाएं दुष्कर्म के खिलाफ सड़कों पर प्रदर्शन कर रही हैं। संसद में भी महिला सुरक्षा पर चिंता जाहिर की गई। संसद सदस्य जया बच्चन ने दुष्कर्मियों को सामूहिक रूप से सजा की मांग करते हुए महिला सुरक्षा के प्रति अपनी चिंता प्रकट की। अन्य सदस्यों ने सामूहिक दुष्कर्म के मामले में शीघ्र सुनवाई कर सामाजिक बदलाव एवं अनुशासन के लिए मौत की सजा दिए जाने की मांग की। जवाब में रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने सदन की सहमति से कठोर कानून बनाने की बात कही है। निर्भया कांड के बाद सदन में दुष्कर्म के खिलाफ कानून में सुधार लाकर सख्त किए थे। फिर भी कानून को ताक में रखते हुए अपराधियों द्वारा सामूहिक दुष्कर्म जैसे अमानवीय कृत्य बिना किसी भय के किए जा रहे हैं। एनसीआरबी की रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 2017 में देश में दुष्कर्म के कुल 32,559 मामले दर्ज किए गए हैं। मध्य प्रदेश में दुष्कर्म के सबसे अधिक मामले दर्ज किए गए हैं। रिपोर्ट के अनुसार तेलंगाना को 18 से 30 वर्ष की महिलाओं के लिए देश में सबसे असुरक्षित राज्य माना गया है। रिपोर्ट में खुलासा हुआ है कि उत्तर प्रदेश सामूहिक दुष्कर्म के बाद हत्या के मामले में सबसे आगे है। जब देश में इस तरह के मामले सामने आते हैं तब देशभर की महिलाओं में भय का माहौल देखने को मिलता है। खासकर नौकरीपेशा महिलाएं ऐसी घटनाओं के बाद खुद को काफी असुरक्षित महसूस करती हैं। कई महिलाएं सुनसान सड़कों, कम यात्री वाले सार्वजनिक वाहनों में प्रवेश करने से डरती हैं। कई महिलाओं को अपनी नौकरी छोड़ कर घर में बैठना पड़ता है। सरकार महिला सशक्तीकरण के लिए अपने बजट से प्रति वर्ष वित्तीय सहायता प्रदान करती है। राज्य सरकार भी महिला सुरक्षा हेतु कदम उठाती है। महिला सुरक्षा एवं सशक्तीकरण का दायित्व सरकार एवं समाज दोनों पर बराबरी का है। इसके लिए सरकार को एवं समाज को जवाबदेही स्वीकार करना चाहिए। सरकार को महिला सुरक्षा हेतु एक सख्त कानून एवं समयबद्ध न्यायिक प्रक्रिया जैसे ठोस कदम उठाने चाहिए जबकि समाज द्वारा अभिभावकों को अपने पुत्रों को अच्छे संस्कार देना चाहिए।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

हैदराबाद में सामूहिक दुष्कर्म की घटना के बाद पटना में विरोध प्रदर्शन करतीं डॉक्टर

कानून का पालन कड़ाई से हो

हैदराबाद में सामूहिक दुष्कर्म एवं हत्याकांड के बाद देश में विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं। इससे पहले निर्भया कांड से पूरे देश में आक्रोश था। जिसके बाद कठोर कानून बनाने की पहल की गई। इसके बावजूद इस तरह की घटनाओं में कमी नहीं आ रही है। सिर्फ कैंडल मार्च से इस समस्या का समाधान नहीं होने वाला है। सिर्फ मोमबत्तियां जलाकर श्रद्धांजलि अर्पित करना एक मानसिक छलावा करने जैसे होगा। ऐसी घटनाओं से निजात पाने के लिए कानून का कड़ाई से पालन करना होगा। सभी पोर्न साइट पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगाना होगा। सामाजिक रूप से हर माता-पिता का दायित्व बनता है कि वह अपने बच्चों को शिक्षा दे कि महिलाओं का सम्मान करे, उनका शोषण न करे, क्योंकि दुष्कर्म करने वाला कोई भी हो वह आखिरकार हमारे समाज से ही निकल कर आते हैं।

नृपेंद्र अभिषेक, छपरा

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।

दैनिक जागरण
आलोचना सुधार की आधारशिला रखती है

विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा

विशेष सुरक्षा समूह यानी एसपीजी को लेकर विपक्ष और खासकर कांग्रेस की ओर से जैसा हंगामा खड़ा किया गया उससे यही अधिक प्रकट हुआ कि इस विशेष दस्ते की सुरक्षा विशिष्टता का परिचायक बन गई है। आखिर विशिष्ट व्यक्तियों के लिए सुरक्षा आवश्यक है या फिर किसी खास दस्ते का सुरक्षा घेरा? जो भी सोनिया गांधी परिवार की सुरक्षा व्यवस्था बदले जाने पर आपत्ति जता रहे हैं वे यह ध्यान रखें तो बेहतर कि प्रारंभ में एसपीजी का गठन प्रधानमंत्री की सुरक्षा के लिए ही किया गया था। बाद में पूर्व प्रधानमंत्रियों और उनके परिजनों को भी उसके दायरे में ले लिया गया। इसी के साथ विशिष्ट व्यक्तियों की सुरक्षा को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना दिया गया। एसपीजी सुरक्षा वाले विशिष्ट से अति विशिष्ट और साथ ही कहीं अधिक बड़े कद वाले नेता समझे जाने लगे। यह सोच सुरक्षा को व्यक्ति विशेष की विशिष्टता से जोड़ने का ही नतीजा है कि बड़ा और रसूख वाला नेता वही जिसकी सुरक्षा व्यवस्था खास किस्म की हो।

गांधी परिवार की सुरक्षा बदले जाने को उनकी सुरक्षा से खिलवाड़ बताने वाले शायद यह जानने की जरूरत ही नहीं समझ रहे कि अभी तक कम से कम चार बार एसपीजी संबंधी कानून में संशोधन किए जा चुके हैं। इनमें से कई संशोधन तब किए गए जब कांग्रेस की या उसके समर्थन वाली सरकार थी। यदि अब यह व्यवस्था की जा रही है कि मौजूदा प्रधानमंत्री के अलावा पूर्व प्रधानमंत्री को पांच साल तक एसपीजी सुरक्षा हासिल होगी तो आखिर इसमें गलत क्या है? जब गांधी परिवार की सुरक्षा कम करने जैसा कोई कदम उठाया ही नहीं गया तो फिर हंगामा क्यों? यह हंगामा किस तरह गांधी परिवार को अति विशिष्ट बताने के इरादे से किया गया, यह इससे जाहिर होता है कि कुछ समय पहले जब पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की एसपीजी सुरक्षा वापस ली गई थी तो किसी ने सवाल नहीं उठाया। इसके पहले पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर, इंद्र कुमार गुजराल और पीवी नरसिंह राव की भी एसपीजी सुरक्षा वापस ली गई थी। ऐसा तभी किया गया जब इन सबके लिए खतरे का अंदेशा कम हो गया था। वास्तव में यही सही तरीका है। सुरक्षा का स्तर खतरे की आशंका से तय होना चाहिए, न कि नेता विशेष के हिसाब से। गांधी परिवार की सुरक्षा हटाई नहीं गई है, बल्कि उसे बदला गया है। अब उसे सीआरपीएफ की जेड प्लस सुरक्षा उपलब्ध होगी। आखिर सुरक्षा के जैसे घेरे में गृहमंत्री हैं उसमें गांधी परिवार क्यों नहीं रहना चाहता? किसी की सुरक्षा का स्तर बदले जाने को इस तरह पेश करना ठीक नहीं कि केंद्र सरकार उसकी सुरक्षा की परवाह नहीं कर रही।

जरूरी है यह सख्ती

बिहार जैसे राज्य में सड़क पर वाहन लेकर निकलने वालों के लिए ड्राइविंग लाइसेंस देने की प्रक्रिया का सख्त होना अत्यंत जरूरी है। नए मोटर कानून में लर्निंग से लेकर स्थायी ड्राइविंग लाइसेंस जारी करने के लिए नियमों में जो परिवर्तन किए गए हैं उससे दलालों पर थोड़ा अंकुश तो लगेगा, लेकिन ये फिर इसकी कोई न कोई काट निकाल ही लेंगे। इसलिए जरूरत यह है कि यातायात नियमों की जानकारी शिक्षा के पाठ्यक्रम में शामिल हो। आम आदमी की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए जिस तरह सरकार ऑनलाइन सुविधाएं बढ़ा रही हैं, उसको देखते हुए सिर्फ यातायात ही नहीं दूसरे क्षेत्रों में हो रहे नियमों-कानूनों में बदलाव की भी जानकारी शैक्षिक पाठ्यक्रमों में शामिल करना जरूरी हो गया है। स्कूली बच्चों को नए नियमों-कानूनों की जानकारी देने को केंद्र और राज्य के शिक्षा बोर्ड को हाईस्कूल या इंटरस्तर के शिक्षा के पाठ्यक्रमों में लिखित विषय के साथ यह भी प्रावधान करना चाहिए कि कम से कम सप्ताह में एक दिन घंटे भर ऐसी क्लास लगे जिसमें किसी विषय विशेषज्ञ को आमंत्रित किया जाए और वह नए नियमों-कानूनों से बच्चों को अवगत कराए। पुराने मोटर कानून में 18 की उम्र होने पर लर्निंग लाइसेंस के लिए आवेदक परिवहन कार्यालय बामुश्किल जाते थे, दलाल घर में ही उनसे फॉर्म पर दस्तखत करा लेते थे और मनमाना पैसे लेकर बाबुओं से सेटिंग कर लाइसेंस बनवाकर घर पहुंचा देते थे। कुछेक साल पहले ऑनलाइन आवेदन की प्रक्रिया शुरू हुई तो थोड़ा अंकुश लगा। अब लर्निंग लाइसेंस के लिए आवेदन के बाद कंप्यूटराइज्ड टेस्ट की प्रक्रिया काफी हद तक सेटिंग से लाइसेंस हासिल करने पर अंकुश लगाएगी। वाहनों की संख्या और सड़क दुर्घटनाओं में तेजी से हुई वृद्धि को देखते हुए नए परिवहन कानून में जो सख्ती के बाद बिहार में लर्निंग लाइसेंस बनवाने के पहले कंप्यूटराइज्ड टेस्ट देना अनिवार्य हो गया है, इस इम्तिहान में उत्तीर्ण होना जरूरी है तभी लाइसेंस मिलेगा। लर्निंग लाइसेंस मिलने के बाद छह माह में स्थायी लाइसेंस के लिए आवेदन देना होगा और इसके लिए फिर से ड्राइविंग टेस्ट देना जरूरी है। कंप्यूटराइज्ड टेस्ट में आवेदक से यातायात नियमों के बारे में पूछताछ की जाएगी। उम्मीद है कि नई लाइसेंस प्रक्रिया राज्य में सुरक्षित यातायात व्यवस्था कायम करने में मदद करेगी।

ड्राइविंग लाइसेंस बनाने की प्रक्रिया में सख्ती के साथ यह भी जरूरी है कि कम उम्र के लोग वाहन चलाते दिखें तो उनसे पूछताछ की जाए

सेना के साये में ही रहेगा पाकिस्तान

विवेक काटजू

पाकिस्तानी सेना प्रमुख के सेवा विस्तार पर अदालती अवरोध के बावजूद वहां नीतिगत ढांचे और सेना के दबदबे में कोई बदलाव नहीं आने वाला

कहने को पाकिस्तान एक लोकतंत्र है जहां चुनी हुई सरकार शासन करती है, लेकिन हकीकत इसके उलट है। यहां सेना प्रमुख को देश की सबसे बड़ी हस्ती माना जाता है। फौज का मुखिया वहां एक पेशेवर सैनिक होने के साथ-साथ देश की सबसे ताकतवर सियासी शख्सियत भी होता है। हालांकि सेना के प्रवक्ता और नेता इससे इन्कार करेंगे, लेकिन इससे सेना प्रमुख के निर्विवाद आभामंडल को झुठलाया नहीं जा सकता। मौजूदा सेना प्रमुख जनरल कमर जावेद बाजवा भी इसी परिपाटी का हिस्सा हैं, मगर फिलहाल उनकी बादशाहत को लेकर एक पेच फंस गया है। यह पेच पाकिस्तान के सुप्रीम कोर्ट ने फंसाया है। यह मामला पाकिस्तानी प्रधानमंत्री इमरान खान द्वारा बाजवा को तीन साल के सेवा विस्तार देने से शुरू हुआ। सुप्रीम कोर्ट में 26 नवंबर को सेवा विस्तार के इस फैसले को चुनौती दी गई। लोग यही मान रहे थे कि इस याचिका पर सुनवाई ही नहीं होगी। हालांकि वे तब भौचक्के रह गए जब कोर्ट ने इमरान के फैसले को रद कर दिया। इसके साथ ही अदालत ने फैसले के पक्ष में सरकार से दलीलें तलब कीं। इसके अगले तीन दिनों तक पाकिस्तान में राजनीतिक एवं कानूनी नाटक पूरे चरम पर रहा। यह इमरान और बाजवा दोनों के लिए भारी शर्मिंदगी का सबब बन गया। उनके लिए राहत की बात सिर्फ यही रही कि अदालत ने बाजवा के छह महीने के सेवा विस्तार को हरी झंडी दिखा दी। इसके साथ ही उसने सरकार को भी गुंजाइश दी कि यदि वह सेवा विस्तार को लेकर उपयुक्त कानून बनाए तो अदालत बाजवा के तीन साल के कार्यकाल को बहाल कर देगी। इस तरह हाल-फिलहाल तो इस मामले का पटाक्षेप हो गया, परंतु बड़ा सवाल यही उठता है कि यह सब कैसे और क्यों हुआ और जो हुआ उसके मायने क्या हैं?

पाकिस्तान में सैन्य प्रमुखों को बहुत सम्मान दिया जाता है। पाकिस्तानी संविधान के अनुसार प्रधानमंत्री की सलाह पर राष्ट्रपति उनकी नियुक्ति करते हैं। हालांकि संविधान में उनके कार्यकाल की अवधि पर स्पष्टता नहीं है। यह सेना की परंपरा के अनुसार ही तय किया जाता है। इस परंपरा के तहत सेना प्रमुख को तीन साल का कार्यकाल मिलता है। अतीत में चुनी हुई सरकारों के दौर में सेना प्रमुख तीन साल पूरे करने के बाद सेवानिवृत्त हो जाते थे। इस परिपाटी को पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी सरकार के प्रधानमंत्री यूसुफ रजा गिलानी ने तोड़ा। गिलानी ने 2010 में तत्कालीन सेना प्रमुख अशफाक कयानी को तीन साल सेवा विस्तार दिया। चूंकि पाकिस्तान के सैन्य शासकों की शक्ति का स्रोत सेना ही रही है इसलिए अमूमन वे इस पद को छोड़ने के अनिच्छुक रहते हैं। यहां तक कि राष्ट्रपति जैसा शीर्ष पद संभालने के बावजूद उन्होंने सेना प्रमुख का ओहदा नहीं छोड़ा। बहरहाल पाक में पहली बार ऐसा हुआ जब सेना प्रमुख से जुड़ा कोई मामला अदालत में गया हो। इससे पहले कभी किसी ने उनसे जुड़े मामले को अदालत में चुनौती नहीं दी। यदि कोशिश की भी गई होगी तो उसे न्यायाधीशों ने तवज्जो नहीं दी। वहां सेना प्रमुखों के इर्दगिर्द ऐसा आभामंडल रचा गया जिसने नेताओं के साथ-साथ न्यायपालिका को भी हमेशा भयाक्रांत करके रखा। वहां जब भी सैन्य तख्तापलट हुए तब शायद ही नेताओं ने उसके खिलाफ विरोध-प्रदर्शन किया हो। इसी तरह अदालतें भी तख्ता पलट पर मुहर लगाती रहीं, लेकिन इस बार मसला अलग था। ऐसा इसलिए, क्योंकि मौजूदा मुख्य न्यायाधीश आसिफ खोसा अलग मिजाज के माने जाते हैं। उन्होंने सेना प्रमुख की सेवा शर्तों को कानूनी कसौटी पर कसने का फैसला किया। इस तरह उन्होंने ऐसा कदम उठाने से गुरेज नहीं किया जो सत्ता में बैठे लोगों को जरूर खटका होगा।

बाजवा के सेवा विस्तार मामले में इमरान सरकार द्वारा अदालत में की गई पैरवी लचर रही। अदालत ने सरकारी वकीलों से सेवा विस्तार के पीछे कानूनी तर्कों पर सफाई मांगी तो वकील बार-बार अपना रुख बदलते रहे। अदालत में दाखिल उनके लिखित हलफनामे विरोधाभास भरे थे। अदालत ने उनकी धज्जियां उड़ाने से परहेज नहीं किया। इस बीच ऐसी आशंकाएं गहराने लगीं कि यदि मामले ने और तूल पकड़ा और अदालत संतुष्ट नहीं हुई तब बाजवा को इस्तीफा देने पर भी मजबूर होना पड़ सकता है। हालांकि ऐसा नहीं हुआ।

मौजूदा घटनाक्रम के परिप्रेक्ष्य में एक पहलू पर गौर करना होगा। पाकिस्तानी फौज ने प्रधानमंत्रियों को यह विकल्प दिया कि वह योग्य जनरलों में से किसी को सेना प्रमुख के पद पर नियुक्त करें। उसने कभी जोर नहीं दिया कि सबसे वरिष्ठ जनरल को ही सेना प्रमुख बनाया जाना चाहिए। इस तरह जुल्फिकार अली भुट्टो ने जिया उल हक को और नवाज शरीफ ने परवेज मुशर्रफ को सैन्य प्रमुख बनाया। दोनों ही अपने दौर में वरिष्ठतम नहीं थे। भुट्टो और शरीफ ने इस उम्मीद के साथ उन्हें सेना के सबसे ऊंचे ओहदे पर बैठाया कि वे उनके वफादार बने रहेंगे। यह उनकी भारी गलती साबित हुई, जिसकी उन्हें बड़ी कीमत चुकानी पड़ी। जिया ने भुट्टो को फांसी पर चढ़ाया तो मुशर्रफ ने शरीफ को जेल में डाल दिया। इससे स्पष्ट है कि पाकिस्तानी सेना प्रमुख अपने हित भी देखता है। इन हितों की पूर्ति के लिए वह अक्सर सेना में अलोकप्रिय होने की भी परवाह नहीं करता। सेना में तमाम अधिकारियों के लिए सेवा विस्तार में यह तब झलकता भी है जब तमाम सामान्य प्रक्रियाओं को ताक पर रखा जाता है। बाजवा लोकप्रिय सेना प्रमुख रहे हैं, मगर इस प्रकरण के बाद उनकी चमक जरूर कुछ फीकी पड़ेगी। ऐसे में सेना को ऐसे किसी कानून से परहेज नहीं होगा जो सेना प्रमुख के लिए एक से अधिक कार्यकाल की राह में कुछ अवरोध पैदा करे। इसकी भी तमाम वजहें हैं। सबसे बड़ी वजह तो यही है कि पाकिस्तानी सेना देश की सामरिक एवं विदेश नीति पर पूरा नियंत्रण चाहती है। इसमें वह कभी नेताओं या न्यायाधीशों का दखल नहीं चाहेगी। जनरल यही मानते हैं कि वे पाकिस्तान की भौगोलिक सुरक्षा एवं वैचारिक नजरिये के वास्तविक संरक्षक हैं। वैचारिक नजरिये का सरोकार उसी द्विराष्ट्र सिद्धांत से है जिसके आधार पर पाकिस्तान बना। उसमें भारत को हिंदू राष्ट्र माना जाता है और इस नाते वह पाक का स्थाई शत्रु है। बाजवा से जुड़े मौजूदा मामले का इनमें से किसी भी पहलू से कोई लेनादेना नहीं। ऐसे में सेना कभी नहीं चाहेगी कि किसी सेवारत या सेवानिवृत्त सेना प्रमुख को बेवजह उन मामलों को लेकर असहज होना पड़े जिनसे उसकी आभा प्रभावित हो।

सैन्य प्रमुख को लेकर सुप्रीम कोर्ट में चले जबरदस्त नाटक के बाद भी वहां नीतिगत ढांचे में कोई बदलाव नहीं आने वाला। पाकिस्तान में हमेशा फौज हावी रही है और भविष्य में भी ऐसा ही होगा। न ही इस बात के कोई संकेत हैं कि भारत के खिलाफ पाकिस्तानी फौज का रवैया बदलने वाला है। भारत को आहत करने के लिए वह आतंकवाद सहित अपने तरकश में हर एक तीर को आजमाने से नहीं हिचकेगी।

(लेखक विदेश मंत्रालय में सचिव रहे हैं)

response@jagran.com

उसूलों पर डटे रहने वाले गुजराल

केसी त्यागी

कई बार राजनीतिक तौर पर नुकसान उठाने के बाद भी गुजराल जीवन भर राजनीतिक शुचिता के पक्ष में खड़े रहे

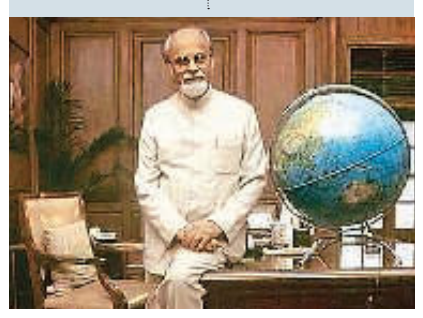

आज यदि इंद्र कुमार गुजराल जीवित होते तो सौ बरस के हो चुके होते। उनका जीवन भारत के पिछले 60 वर्षों की महत्वपूर्ण राजनीतिक घटनाओं का दर्पण है। गुजराल राजनीतिक घटनाक्रम को डायरी की शक्ल देने में माहिर थे। उनकी डायरी में दर्ज बातों को देखकर यह सहज ही समझा जा सकता है कि भारतीय राजनीति किन पड़ावों से गुजरी है। उनके जीवन की ये घटनाएं बताती हैं कि उन्होंने अपने तरीके से दबाव की राजनीति का सामना किया। उन्हें दबाव की राजनीति से जूझने की कला बखूबी आती थी। शालीनता, स्पष्टवादिता के साथ सभ्य समाज की मर्यादाओं में रहकर उन्होंने अपने कर्तव्यों को अंजाम दिया। उनका जन्म 4 दिसंबर 1919 को वर्तमान पाकिस्तान में झेलम के निकट हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा लाहौर में हुई। सांस्कृतिक तौर पर समृद्ध गुजराल को बचपन में ही उर्दू और हिंदी साहित्य के नामचीन लोगों की संगत मिली। उस समय के दिग्गज शायरों में शुमार फैज अहमद फैज से उन्हें अंग्रेजी पढ़ने का सौभाग्य मिला। प्रारंभिक दिनों में वह वामपंथी आंदोलनों और विचारों से भी प्रभावित रहे। साहिर लुधियानवी, किशन चंदर, राजेंद्र सिंह बेदी, भीष्म साहनी, अली सरदार जाफरी, कैफी आजमी उनके हमउम्र भी थे और हमख्याल भी। बंटवारे के बाद उनका पूरा परिवार भारत लौटा और दिल्ली को अपनी कर्मस्थली बनाया। कांग्रेसी नेताओं से उनके संबंध बढ़ते गए। इंदिरा गांधी और सुचेता कृपलानी से करीबी का नतीजा यह रहा कि 1964 में गुजराल को राज्यसभा के लिए चुना गया। तब इंदिरा गांधी के करीबी लोगों में उमाशंकर दीक्षित, दिनेश सिंह गिने जाते थे। इन्हीं दिनों यशपाल कपूर ने उनसे कहा था कि आप संवेदनशील स्वभाव के हैं इसलिए श्रीमती गांधी से आपकी ज्यादा नहीं निभेगी। वरिष्ठ मंत्री सी. सुब्रमण्यम ने भी उन्हें नसीहत देते हुए कहा कि श्रीमती गांधी के करीब जाने की कोशिश मत करना, नहीं तो बाहर कर दिए जाओगे। हालांकि सूचना एवं प्रसारण मंत्री बनकर वह श्रीमती गांधी के विश्वस्त साथियों में शुमार हुए। वैसे उन्होंने बाद में यह स्वीकार किया कि इंदिरा जी का व्यक्तित्व काफी जटिल था जिससे उन्हें कई बार दो-चार होना पड़ा।

1971 के लोकसभा चुनाव में श्रीमती गांधी को भारी बहुमत मिला। इसके बाद गुजराल को आवास मंत्री बनाया गया। इसके एक सप्ताह बाद ही श्रीमती गांधी ने उन्हें डांट लगाई कि तुमने अभी तक दिनेश सिंह को सरकारी आवास से निकाला क्यों नहीं? उन्हें धीरेंद्र ब्रह्मचारी के कारण भी इंदिरा जी की नाराजगी का शिकार होना पड़ा। ब्रह्मचारी श्रीमती गांधी के योग गुरु थे। वह गोल डाकखाने के पास अपने आश्रम के लिए अतिरिक्त भूमि चाहते थे। गुजराल ने जब यह आवंटित करने में असमर्थता जताई तो ब्रह्मचारी ने उन्हें चेतावनी दी। कुछ दिनों बाद जब मंत्रिमंडल में फेरबदल हुआ तो उमाशंकर को उनका कैबिनेट मंत्री बना दिया, पर वह भी आश्रम के लिए भूमि की व्यवस्था नहीं करा पाए। इसके कुछ समय बाद दोनों मंत्रालय से हटा दिए गए और कुछ समय बाद पता चला कि ब्रह्मचारी को अशोक रोड पर अतिरिक्त भूमि दे दी गई। ऐसे घटनाक्रमों ने गुजराल को एक सिद्धांतवादी नेता के रूप में गढ़ने का काम किया। हालांकि कई अवसरों पर उन्हें समझौतावादी न होने पर राजनीतिक तौर पर नुकसान भी उठाना पड़ा, लेकिन वह उसूलों पर डटे रहे।

आपातकाल के दौरान इंदिरा गांधी जेपी आंदोलन से भयभीत भी थीं और परेशान भी। सूचना एवं प्रसारण मंत्री होने के नाते गुजराल से उनकी अपेक्षा यह थी कि वह सरकार का मुखौटा बनकर रहें। गुजराल उस दौर को आपत्तिजनक घटनाक्रम के रूप में देखते थे। उनकी डायरी में दर्ज है कि अप्रैल 1976 में एक दिन श्रीमती गांधी ने किस तरह उनसे कहा कि तुम्हारा राज्यसभा का कार्यकाल समाप्त हो चुका है और अब तुम मॉस्को चले जाओ। गुजराल ने अनिच्छा जताते हुए सोवियत संघ के करीबी नेताओं जैसे नुरूल हसन, चंद्रजीत यादव, शशि भूषण आदि का नाम सुझाया और यह भी पूछा कि क्या आप मुझसे नाराज हैं, जो मुझे मॉस्को भेज रही हैं? इस पर श्रीमती गांधी ने कहा कि आप गलत समझ रहे हैं। मैं जिससे नाराज होती हूं उसे मॉस्को नहीं फिजी भेजती हूं। मॉस्को में बतौर राजदूत उन्होंने सोवियत संघ को भारत के और करीब लाने का प्रयास किया। बाद में वह वीपी सिंह सरकार में विदेश मंत्री बने। इसके बाद चंद्रशेखर ने भी गुजराल को विदेश मंत्री बनाने का प्रस्ताव भेजा, जिसे उन्होंने विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया।

1992 में वीपी सिंह उन्हें राज्यसभा में भेजने की संतुति कर चुके थे। मंडल लागू होने के बाद लालू यादव जनता दल में निर्णायक नेता के रूप में स्थापित हो चुके थे और बिहार से गुजराल का राज्यसभा में नामांकन उन्हीं की कृपा पर निर्भर था। लालू ने राज्यसभा के लिए किस तरह उन्हें अपमानित-प्रताड़ित करने का प्रयास किया, यह भी उनकी डायरी में लिखा है। उन्हें बिहार भवन और पटना के कई चक्कर काटने पड़े। तब उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब लालू ने कुछ विधायकों को खरीदने के लिए उनसे पैसे का इंतजाम करने को कहा। इससे पहले लालू उन्हें पार्टी की पसंद का आखिरी उम्मीदवार बनाकर काफी असहज स्थिति में रखे हुए थे। तमाम मशक्कत के बाद लालू उन्हें राज्यसभा भेजने के लिए प्रयत्नशील हुए। गुजराल के सामने इससे भी विषम परिस्थिति तब पैदा हुई जब वह देवगौड़ा के बाद प्रधानमंत्री बने। पहली चुनौती उन्हें लालू यादव के विरुद्ध चारा घोटाले में उनकी संलिप्तता की सीबीआइ जांच को लेकर सामने आई। लालू ने उनसे राहत दिलाने को कहा, लेकिन गुजराल नहीं माने। लालू ने उनसे बिहार के राज्यपाल एआर किदवई को चार्जशीट दाखिल करने की मंजूरी देने में देरी के लिए भी कहा, लेकिन गुजराल कोई समझौता नहीं करना चाह रहे थे। आखिर लालू के खिलाफ चार्जशीट दाखिल हुई।

जब राजीव गांधी हत्याकांड को लेकर गठित जैन आयोग के खुलासे में अपरोक्ष रूप से द्रमुक नेताओं की संलिप्तता दर्शाई गई तो कांग्रेस नेताओं ने द्रमुक कोटे के मंत्रियों को हटाने की जिद पकड़ ली। गुजराल द्वारा इसे अस्वीकार करने के बाद उनकी सरकार गिर गई। आज वही द्रमुक कांग्रेस का सबसे महत्वपूर्ण सहयोगी दल है।

(लेखक जदयू के राष्ट्रीय प्रवक्ता हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

जन्म की सार्थकता

ईश्वर की संरचना में सर्वाधिक श्रेष्ठ स्थिति मनुष्य की है। मानव शरीर पाने के लिए देवता भी तरसते हैं। देखा जाए तो सबसे उच्च पायदान पर मानव है। जानवर उससे नीचे हैं, लेकिन जो जितनी ऊंचाई पर रहता है, वह जब गिरता है तो किस निम्न स्तर पर गिरेगा कहा नहीं जा सकता। सबसे उच्च शिखर पर बैठा मनुष्य कभी-कभी जानवर से भी नीचे चला जाता है। किसी मनुष्य पर रोष उतारने के लिए प्रायः जानवरों से तुलना कर दी जाती है, लेकिन जानवर भी अपना पेट पालने के लिए हमेशा एक ही काम करते हैं। जंगल का राजा शेर होता है, लेकिन उसका भी अपना सिद्धांत है। एक तो वह अपने आहार के लिए शिकार खुद करता है और झूठे बासी मांस का भक्षण नहीं करता। इसके अलावा जब उसका पेट भर जाता है तो बचे हुए हिस्से को बांधकर संग्रह नहीं करता। उसे छोड़कर चल देता है। तब बचे हुए हिस्से का भक्षण दूसरे असहाय जानवर करते हैं। इस कारण पर्यावरणविद शेर को जंगल का रक्षक बताते हैं।

गांव से लेकर महानगरों तक धोखाधड़ी, तिकड़म, नारी अस्मिता का चीरहरण जिस घटिया स्तर तक हो रहा है, वह जानवरों से भी निचले स्तर का है। बड़े घनिष्ठ से दिखने वाले दोस्त ही नहीं खुद घर के खून के रिश्ते से बंधे लोग क्या-क्या नहीं कर रहे हैं। सक्षम होते ही माता-पिता को वृद्धाश्रम का रास्ता दिखाना क्या यह अच्छा संस्कार है। सार्वजनिक जीवन में आदर्श, सत्य, संस्कार, धर्म का प्रवचन देने वालों तक की करनी आए दिन लोगों के सामने है। यही सब कारण था कि राजा सिद्धार्थ को मानव-जीवन से नफरत हो गई थी। गोस्वामी तुलसीदास की आत्मा ने उन्हें झकझोर दिया था।

इनके जीवन से यह सीख मिलती है कि घटिया स्तर की सोच जब मनुष्य छोड़ देगा, उसी समय उसका मनुष्य के रूप में जन्म सार्थक होगा। यदि ऐसा नहीं करता तो उसका अगला जन्म क्या होगा, यह तो फिलहाल स्पष्ट नहीं है, लेकिन कु-संस्कार उसके परिवार में घुस गया तो उसकी अगली पीढ़ी गलत रास्ते पर प्रायः चली जाएगी, क्योंकि घर के बच्चे बड़ों की नकल करते हैं।

सलिल पांडेय

फरिश्ते बनिए, मूकदर्शक नहीं!

सुधीर कुमार

बतौर नागरिक हमारा प्रथम दायित्व सड़क दुर्घटना में घायल हुए किसी व्यक्ति को समय से अस्पताल पहुंचाना होना चाहिए

दिल्ली सरकार ने सड़क दुर्घटना के शिकार लोगों की मदद करने वाले नागरिकों को सम्मानित और प्रोत्साहित करने के लिए 'फरिश्ते दिल्ली' नाम से एक योजना प्रारंभ की है। इसका मकसद सड़क हादसे का शिकार हुए हर शख्स के लिए सरकारी तथा निजी अस्पतालों में निःशुल्क चिकित्सीय सुविधाएं उपलब्ध कराना तथा सड़कों पर घायल हुए व्यक्ति को अस्पताल तक पहुंचाने के निमित्त राहगीरों को जागरूक बनाना है। इसके तहत सड़क दुर्घटना में घायल व्यक्ति को 'फरिश्ता' बनकर अस्पताल तक पहुंचाने वाले शख्स को सरकार दो हजार रुपये का इनाम देने के अलावा प्रोत्साहन प्रमाण पत्र भी दे रही है। मानवीय संवेदना का उदाहरण प्रस्तुत करने वाले ऐसे शख्स से किसी भी तरह की पूछताछ नहीं की जाती है और न ही उनकी पहचान को सार्वजनिक किया जाता है। पहले लोग इस बात से डरते थे कि अस्पताल पहुंचाने पर उनके लिए समस्या न बढ़ जाए। पुलिस का भी डर रहता था। हालांकि 2016 से ही सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद देश में घायलों की मदद करने वाले इंसानी फरिश्तों को बेवजह परेशान किया जाना लगभग बंद हो चुका है।

सड़क हादसों में घायल शख्स को अस्पताल तक पहुंचाने की प्रवृत्ति में वृद्धि के लिए कई राज्य सरकारों ने पुरस्कृत करने की योजना बनानी शुरू की है। पुदुचेरी सरकार ने भी घायलों को अस्पताल पहुंचाने वाले इंसानी 'फरिश्ते' को 5 हजार रुपये का इनाम देने की घोषणा की है। केंद्रीय मंत्री नितिन गडकरी ने भी कहा है कि सड़क हादसों में घायलों की मदद करने वाले अब 'वीरता पुरस्कार' के हकदार होंगे। इस तरह की योजना शुरू करने का एक ही मकसद है कि लोग नैतिक कर्तव्य के तहत घायलों की मदद करें। इस तरह की प्रोत्साहन योजना से राहगीरों में घायलों के प्रति सहानुभूति और मानवता का भाव स्थापित करने तथा दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति की मदद के लिए नागरिकों को तत्पर बनाने में मदद मिल सकेगी।

गौरतलब है कि देश में सड़क हादसों में घायल हुए कई व्यक्तियों को 'गोल्डन ऑवर' के भीतर उचित चिकित्सीय सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। किसी भी गंभीर परिस्थिति में मरीज के लिए दुर्घटना के बाद का पहला एक घंटा बेहद अहम होता है। इसे ही चिकित्सीय भाषा में 'गोल्डन ऑवर' कहा जाता है। इस समय में दिया गया इलाज घायलों की जिंदगी को बचाने में काफी महत्वपूर्ण साबित होता है। मालूम हो कि ऐसे 80 फीसद मामलों में घायलों को आपात चिकित्सीय सेवा नहीं मिल पाती है! अंतरराष्ट्रीय सड़क संगठन के मुताबिक दुनिया में सर्वाधिक सड़क हादसे भारत में होते हैं। भारत सरकार के मुताबिक देश में हर साल सड़क दुर्घटनाओं में डेढ़ लाख से भी अधिक लोग मारे जाते हैं। मरने वालों में कई ऐसे भी रहे होंगे जिन्हें अगर समय पर अस्पताल तक पहुंचाया गया होता तो उनकी जान बच गई होती! जाहिर है बतौर नागरिक हमारा प्रथम दायित्व सड़क हादसे में घायल व्यक्ति को अस्पताल पहुंचाना या एंबुलेंस की व्यवस्था करना होना चाहिए।

(लेखक बीएचयू में अध्येता हैं)

मेलबाक्स

अव्यावहारिक सुझाव

गुलाम कश्मीर की वापसी का रास्ता शीर्षक से लिखे अपने लेख में कैप्टन आर विक्रम सिंह ने गुलाम कश्मीर के 10 जिलों सहित भारतीय पश्चिमी कश्मीर के चार सीमांत जिलों को मिलाकर एक तीसरा केंद्रशासित प्रदेश बनाने का विचार दिया है। यह प्रस्ताव पढ़ने-सुनने में आकर्षक एवं दिल को सुकून देने वाला है, लेकिन संभवतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में व्यावहारिक नहीं है। कारण, अनुच्छेद 370 की समाप्ति एवं जम्मू-कश्मीर और लद्दाख को दो अलग-अलग केंद्रशासित प्रदेश बनाने से पाकिस्तान पहले से ही बौखलाया हुआ है। उसने इस मामले को विश्व के प्रत्येक मंच से उठाने की कोशिश की है। यह सही है कि उसे उन मंचों से उस तरह का समर्थन नहीं मिला जैसी कि उसकी प्रत्याशा थी, लेकिन चीन, तुर्की तथा मलेशिया जैसे देशों द्वारा उसके सुर में सुर मिलाने से भारत की चिंता बढ़ी है। अब अगर भारतीय नेतृत्व जल्दी में जम्मू-कश्मीर पर इस तरह का कोई आक्रामक फैसला लेता है तो संभव है कि पाकिस्तान की सरकार अपनी जनता का ध्यान भटकाने के लिए भारत के खिलाफ युद्ध पर ही उतर जाए। इधर भारत सरकार ने देश को आर्थिक क्षेत्र में एक महाशक्ति बनाने के लिए बड़े संरचनात्मक बदलावों (यथा-जीएसटी, दिवालिया कानून, रेरा, नोटबंदी आदि) को अपनाया है। इस समय उसका मुख्य ध्यान भारत को 2024 के पूर्व पांच ट्रिलियन डॉलर वाली अर्थव्यवस्था बनाना है। ऐसी स्थिति में क्या भारत पाकिस्तान के साथ युद्ध के हालात के लिए तैयार है? यह एक गंभीर सवाल है।

चंदन कर्ण, देवघर

दोषियों के मन में भय होना जरूरी

हैदराबाद की घटना हमारी संस्कृति और संस्कारों को आईना दिखाने वाली है। अब तो बेटियां अपने घर में भी सुरक्षित नहीं हैं। हैदराबाद कांड की खबर की स्याही अभी सूखी भी नहीं थी कि राजस्थान में एक बाप ने ही अपनी बेटी की अस्मिता तार तार कर दी। कलियुगी पिता बेटी को जंजीर से बांध कर दुष्कर्म करता रहा। इस तरह की घटनाओं पर लिखने के लिए लेखनी गूंगी हो जाती है। यदि हम इतिहास के पन्नों में झांक कर देखें तो द्रौपदी के चीरहरण के कारण महाभारत का युद्ध हो गया था। रावण ने सीता का हरण किया तो राम ने रावण को यमलोक भेज दिया। अब तो बेटियों की लाज लुटती रहती है, कुछ लोग जुलूस निकालते हैं, खबर बनती है और फिर रद्दी की टोकरी में चली जाती है। परिवार की प्रतिष्ठा के नाम पर कुछ घटनाएं सामने नहीं आतीं और जो घटनाएं सामने आती हैं वे न्यायालय की लंबी प्रक्रिया में उलझ कर रह जाती हैं। वसंत विहार सामूहिक दुष्कर्म कांड को ही ले लीजिए। 2012 से मामला कोर्ट में चल रहा है, लेकिन गुनहगारों को अभी तक फांसी की सजा नहीं दी गई है। दुष्कर्म की घटनाओं पर अंकुश लगाने के लिए दोषियों के मन में भय बैठाना होगा। इसके लिए सरकार को कठोर कानून बनाना होगा। न्यायालय में सुनवाई और निर्णय की समय सीमा तय करनी होगी। यदि बेटियों को बचाना है तो सरकार को तत्काल कानून में संशोधन करना चाहिए। और कठोर से कठोर कानून बनाना चाहिए, ताकि अपराधियों की आत्मा कांप जाए।

रणजीत वर्मा, फरीदाबाद

दफ्तरों में मिले आत्मरक्षा की ट्रेनिंग

वसंत विहार सामूहिक दुष्कर्म कांड को सात वर्ष हो चुके हैं, लेकिन दोषी आज भी सलाखों के पीछे जीवित हैं। न्यायपालिका ने दोषियों को जो सजा सुनाई है प्रशासन द्वारा उस पर अभी भी विचार हो रहा है और उनकी क्षमा याचिका राष्ट्रपति भवन पहुंच चुकी है। इस पर कुछ फैसला आए उससे पहले ही हैदराबाद में एक डॉक्टर इसी प्रकार की हैवानियत का शिकार हो गई। इस तरह की घटनाओं पर तेजी से कार्रवाई होनी चाहिए, लेकिन कछुए की गति से कार्य हो रहा है। इसका परिणाम यह होता है कि अपराधी इसी प्रकार से फिर अपराध को जन्म देने लगता है। सजा मिलने में देरी के कारण अपराधियों को दर्दनाक हादसे करने की सजा तक का पता नहीं होता। स्कूल-कॉले

हिन्दुस्तान

विक्रम लैंडर को खोजना

लगन का क्या अर्थ होता है और उसके नतीजे कैसे होते हैं, इसे जानना हो, तो हमें चेन्नई के षणमुगा सुब्रमण्यम की सफलता से समझना होगा। अपने घर के एक कोने में नासा के ल्यूनर रिकॉनसेंस आर्बिटर के लगातार अपडेट होने वाले डाटा को खंगालते हुए वह चांद के उस कोने को ढूंढ़ने में कामयाब रहे, जहां चंद्रयान-2 से छोड़े गए विक्रम लैंडर का मलबा गिरा पड़ा है। तमाम बाधाओं के बाद भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान यानी इसरो का चंद्रयान-2 अभियान इस साल 22 जुलाई को शुरू हुआ था। अंतरिक्ष के लंबे और वक्रीय रास्ते को पार करने के बाद इसे आखिर में 6 सिंतबर को चांद पर विक्रम लैंडर को उतारना था। पूरा अभियान सफलता से चला, लेकिन आखिरी वक्त में उस समय मामूली सी चूक हो गई, जब विक्रम लैंडर को चांद की सतह को छूना था। इस वजह से अंतिम समय में विक्रम लैंडर ध्वस्त होकर चंद्रमा की सतह पर बिखर गया। आखिरी क्षणों की इस छोटी सी नाकामी को छोड़ दें, तो भारत ने यह तो साबित कर ही दिया था कि वह चांद की सतह पर अपने यान को पहुंचा सकता है।

जिस दिन यह घटना हुई, उसके बाद से सुब्रमण्यम चांद की विस्तृत उपग्रह तस्वीरों में उस जगह को ढूंढ़ने में जुट गए, जहां विक्रम लैंडर का मलबा गिरा है। ल्यूनर रिकॉनसेंस आर्बिटर की डाटा साइट पर चांद की सतह का विस्तृत ब्योरा लगभग उसी तरह से है, जैसे गूगल मैप में हमारी धरती की तस्वीर है। कोई भी वहां जाकर चांद की सतह को खंगाल सकता है। सुब्रमण्यम जुटे रहे और अंत में उस जगह को ढूंढ़ने में कामयाब रहे, जहां वह मलबा गिरा था। हालांकि उसे पहचानना बहुत आसान नहीं था। उपग्रह की तस्वीरें जिस तरह की होती हैं, उनमें इमारतों और बड़े भौगालिक आकारों को तो पहचाना जा सकता है, लेकिन मिट्टी में कुछ भी गिरा बिखरा पड़ा हो, तो उसे पहचानना बहुत आसान नहीं होता। खासकर जब वह सब एक छोटे से बिंदु के आकार का हो। सुब्रमण्यम ने उसी जगह की आठ साल पुरानी तस्वीरें निकालीं और दोनों के अंतर ने सारी तस्वीर साफ कर दी। सुब्रमण्यम ने अपनी पड़ताल के नतीजे अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा को भेजे, अपनी जांच के बाद मंगलवार को नासा ने भी यही कहा कि सुब्रमण्यम ने जो बिंदु खोजे हैं, वे विक्रम लैंडर के ही टुकड़े हैं। ये टुकड़े उस जगह से 750 मीटर दूर मिले हैं, जहां दरअसल विक्रम लैंडर को उतरना था। दिलचस्प बात यह है कि सुब्रमण्यम कोई अंतरिक्ष वैज्ञानिक नहीं हैं। वह पूरे दिन चेन्नई की एक निजी कंपनी में काम करते हैं और रात को घर पर अंतरिक्ष की जानकारी लेने का काम शौकिया तौर पर करते हैं।

अंतरिक्ष की बहुत सारी जानकारी अब हम सबकी पहुंच के भीतर है, षणमुगा सुब्रमण्यम ने इसी के जरिए एक नई कामयाबी हासिल कर ली।

यह भी मुमकिन है कि ये सारे ब्योरे इसरो के पास पहले से ही मौजूद हों। इसरो ने इसे लेकर कुछ तस्वीरें भी जारी की थीं, लेकिन सुब्रमण्यम की पड़ताल के बाद जो तस्वीरें सामने आई हैं, वे ज्यादा साफ और ज्यादा रेजोल्यूशन वाली हैं। हो सकता है कि इसरो के लिए इसका कोई बहुत बड़ा अर्थ न भी हो, लेकिन सुब्रमण्यम की सफलता ने यह तो बता दिया कि अंतरिक्ष का बहुत सारा डाटा अब आम लोगों के लिए आसानी से उपलब्ध है। और जिन खोजा, तिन पाइयां की तर्ज पर यहां भी कामयाबी के कई दरवाजे खुल सकते हैं। ब्रह्मांड के बहुत सारे रहस्य अब सबकी पहुंच के भीतर हैं।

विदेशी अखबार से

खिलाड़ियों से दगा

खिलाड़ी तुलसा केसी ने देश का थोड़ा ध्यान खींचा है। तुलसा को दक्षिण एशियाई खेलों में स्वर्ण का दावेदार माना जा रहा था और अब सोशल मीडिया पर कोहराम मचा है। जमीनी हकीकत स्वीकार किए बिना अधिकारी यह बताने की कोशिश में हैं कि तुलसा ने कतर जाने का फैसला करके देश को धोखा दिया है। हमें पूछना चाहिए कि आखिर उसने स्वर्ण जीतने का मौका छोड़कर दूसरे देश में काम के लिए जाने का रास्ता क्यों चुना? दरअसल, नेपाल खेलों को बढ़ावा देने में अक्षम है। अपने खिलाड़ियों की मूलभूत सुविधा सुनिश्चित करने में विफल है। यह अहम सवाल भी पैदा होता है कि नेपाली लोग आखिर काम के लिए विदेश जाने को क्यों मजबूर हैं? तुलसा की निंदा करने से पहले यह सोचा जाना चाहिए कि किसी पराए देश में काम करने को तुलसा ने आखिर बेहतर विकल्प क्यों माना? क्या वह नेपाल के लिए पदक जीतने में अपना सुरक्षित भविष्य नहीं देख पा रही थी? नेपाल अपने नायकों, विजेताओं को लेकर उत्सव तो मनाता है, तब भी यहां खिलाड़ियों के लिए स्थाई आजीविका मुश्किल है। एक एथलीट या खिलाड़ी का करियर औसतन 10 वर्ष का होता है, इन वर्षों में वह खुद को पूरी तरह से खेल में झोंक देता है, लेकिन रिटायरमेंट के बाद कोई अन्य रोजगार करने का कौशल उसमें नहीं होता और तब शुरू होती हैं उसकी परेशानियां। उनके सामने पूरी जिंदगी पड़ी होती है और एक पूरे परिवार को सुरक्षित करने की जिम्मेदारी भी। कुछ एथलीट फिर भी कवरेज बटोर लेते हैं, मगर ज्यादातर के पीछे कोई प्रायोजक नहीं होता। पर्वतारोही एल शेरप्पा की दयनीय हालत पर *द गार्जियन* ने स्टोरी प्रकाशित की थी। ऐसे कई तुलसा और शेरप्पा हैं, जो जीने के लिए भी जरूरी कमाई को जूझते रहते हैं, उनके भविष्य का सवाल तो छोड़ ही दीजिए। मिसाल के लिए, पैराग्लाइडिंग टीम की महीनों की तैयारी बेकार चली गई, क्योंकि अधिकारी इस टीम को बुनियादी मदद भी मुहैया नहीं करा पाए, नेपाल आठ पदकों से वंचित हो गया। वास्तव में, एथलीटों ने नहीं, व्यवस्था ने नेपाल के एथलीटों के साथ दगा किया है।

THE KATHMANDU POST

काठमांडू पोस्ट, नेपाल

79 साल पहले

हिन्दुस्तान Hindustan

चीन में कठपुतली सरकार

टोकियो, २ दिसम्बर। शुक्रवार को नानकिंग में जापान और चीन की कठपुतली सरकार के बीच एक सन्धि हो गई जिसके अनुसार ''जापान और चीन के सैद्धांतिक सम्बन्ध'' निश्चित कर दिए गए। इस सन्धि की पांचवीं शर्त के अनुसार पुरानी परिपाटी के अनुकूल अथवा दोनों देशों के हितों की रक्षा हेतु जापान आवश्यक समय के लिए अपनी जल और थल सेना कुछ विशेष इलाकों में रख सकेगा। इस बारे में दोनों देशों के बीच एक स्वतन्त्र सन्धि होगी। यह सन्धि अगले १ दिसम्बर से अमल में लाई जायेगी। और इसके अन्तर्गत आर्थिक सम्बन्धों, पड़ोसी के सम्बन्धों पर समझौता कर लिया गया है। चीन पर जापानी सेना के कब्जे की समस्या पर बाद में विचार किया जायेगा। इस सन्धि की तीसरी शर्त के अनुसार, दोनों देशों की सरकारों ने कम्यूनिज्म के विरुद्ध एक संयुक्त समझौता किया है। दोनों सरकारें मिलकर कम्यूनिस्ट संस्थाओं को नष्ट करेंगी। इस उद्देश्य से एक निश्चित अवधि के लिए जापान अपनी सेनाएं मिलचियांग और उत्तरी चीन के प्रान्तों में रखेगा। रायटर का सम्वाददाता लिखता है कि इस सन्धि के कम्यूनिस्ट विरोधी प्रस्ताव बहुत महत्वपूर्ण हैं। उनके आधार पर ही दोनों देश कम्यूनिस्टों के विरुद्ध मिलकर काम करेंगे।

3 दिसम्बर, 1940 को प्रकाशित

हुआ तो इस बार भी वही

निर्भया कांड के बाद हुए बदलावों से बहुत उम्मीद बांधी गई थी, हैदराबाद की घटना ने बताया कि अभी तक न पुलिस का रवैया बदला है, न समाज का।

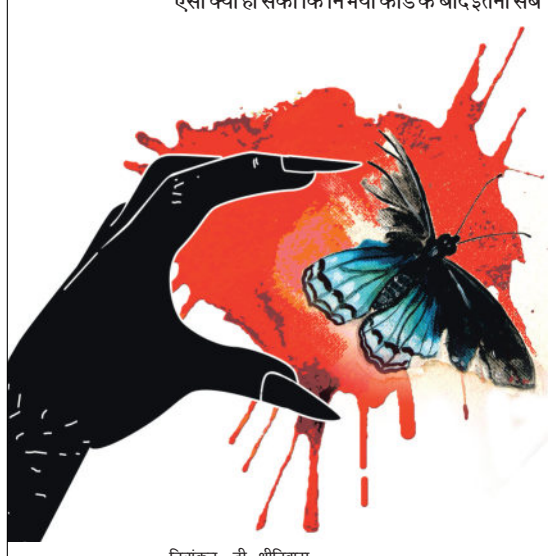

चित्रांकन : डी. श्रीनिवास

हैदराबाद में 28 नवंबर को महिला पशु चिकित्सक के साथ जो कुछ हुआ, वह दिसंबर 2012 की एक सर्द रात दिल्ली में निर्भया के साथ घटी की पुनरावृत्ति मात्र ही था। यह भी कम चिंताजनक नहीं है कि दोनों महिलाओं के साथ यह बर्बरता राजधानियों में हुई- एक देश की, और दूसरी तेलंगाना की राजधानी में। इन दोनों शहरों की पुलिस को संसाधनों के मामले में देश में अव्वल माना जाता है और दोनों क्षेत्रों की सरकारें महिलाओं के लिए इन शहरों के सुरक्षित होने का दावा करती हैं। जब तक मीडिया और नागरिक अधिकार संगठनों ने हल्ला-गुल्ला नहीं मचाया, दोनों प्रसंगों में हमें एक जैसी संवेदनहीन राजनीति और पुलिस कार्रवाई दिखी।

ऐसा क्यों हो सका कि निर्भया कांड के बाद इतना सब कुछ होने के बावजूद हैदराबाद हो गया? निर्भया के बाद कानून सख्त किया गया और बलात्कार के मामलों में मृत्युदंड का अनिवार्य प्रावधान कानून का अंग बना। साथ ही, दूसरे कानूनी झोल दूर हुए और तंत्र को सुदृढ़ करने के लिए निर्भया फंड की व्यवस्था की गई। यह अलग बात है कि विधायिका की बहसों और सूचना के अधिकार के तहत अलग-अलग स्रोतों से मिली जानकारियों से स्पष्ट है कि इस फंड का बड़ा हिस्सा या तो खर्च ही नहीं हुआ या बहुत से मामलों में उसका दुरुपयोग हुआ। स्पष्ट है, इस महान जगद्गुरु देश में वांग्मय में भले औरत को देवी घोषित कर दिया जाए, लेकिन उसे एक मनुष्य के रूप में जीने का अधिकार देने में शासक वर्ग की कोई दिलचस्पी नहीं है।

यदि निर्भया कांड के बाद तंत्र सचमुच गंभीर हुआ होता, तो यह कैसे संभव हुआ कि हैदराबाद की पीड़िता के परिजन अपनी रपट लिखाने के लिए एक से दूसरे थाने की दौड़ लगाते रहे और वह मूल्यवान समय जाया हो गया, जिसमें भाग-दौड़ करने पर कम से कम उसकी जान बच सकती थी। निर्भया के मामले में भी ऐसी ही लापरवाही हुई थी। इस बार भी नेताओं ने उतने ही गैर-जिम्मेदाराना बयान दिए। सोशल मीडिया पर लताड़े जाने पर तेलंगाना के गृह मंत्री ने अपना अविवेकी वक्तव्य वापस लिया।

हर गंभीर प्रकरण की ही तरह यह प्रसंग भी एक विस्तृत विमर्श की मांग करता है। भारतीय पुरुषों को यह समझने की जरूरत है कि स्त्री के शरीर पर उसका अपना अधिकार है और मनु की यह व्यवस्था कि वह वय की विभिन्न स्थितियों में पिता, पति या पुत्र के अधीन होगी, एक मनुष्य विरोधी अवधारणा है। इन संस्कारों से मुक्त होने पर ही भारतीय पुरुष यह स्वीकार कर सकेगा कि बलात्कार या उसके भय से मुक्त होकर निर्द्वंद्व विचरण, पोशाक का चयन या रोजगार औरत के मौलिक अधिकार हैं। तभी बीमार मानसिकता वाले ऐसे तर्क नहीं दिए जा सकेंगे कि लड़कियां अपने कपड़ों, देर तक बाहर घूमने या लड़कों से दोस्ती के चलते खुद बलात्कार को निमंत्रित करती हैं। ये तर्क सिर्फ कम पढ़े-लिखे लोगों के मुंह से ही नहीं, अक्सर भारी-भरकम डिग्रियों वालों के मुखारविंद से भी सुनने को मिलते हैं। कई बार कुछ महिलाएं भी ऐसी राय प्रकट करती दिखती हैं। सिमोन द बुआ ने लिखा था कि औरत पैदा नहीं होती, उसे बनाया जाता है। अपने प्रचलित मूल्यों से समाज उसे 'अच्छा' या 'बुरा' बनाता है। भारतीय समाज तो इस मामले में ज्यादा शातिर है। वह औरत को 'देवी' घोषित कर देता है और इस तरह उसके इंसानी हकूक से अपना पीछा छुड़ा लेता है। एक लंबी लड़ाई के बाद ही भारतीय पुरुष को यह सिखाया जा सकेगा कि स्त्री देवी नहीं, हाड़-मांस युक्त एक मनुष्य है और हिंसा मुक्त जीवन उसका मौलिक अधिकार है।

निर्भया से लेकर हैदराबाद की घटना तक अनगिनत मामलों में पीड़ित परिवारों को पुलिस और न्याय दिलाने वाले तंत्र की असंवेदनशीलता से जूझना पड़ा है। एफआईआर दर्ज कराने में हर बार देरी होती है और हर बार वह कीमती समय नष्ट होता है, जो किसी शिकार को शिकारियों के चंगुल से बचा सकता है या अपराधियों तक पहुंचने में पुलिस की मदद कर सकता है। हैदराबाद के मामले में कुछ पुलिसकर्मियों को हर बार की तरह निलंबित किया गया है, पर मेरा अनुभव कहता है कि हर बार की तरह कुछ महीने बाद ये सभी बिना किसी दंड या बहुत छोटी सजा के साथ बहाल कर दिए जाएंगे। क्या इस पर गंभीरता से विचार नहीं किया जाना चाहिए कि सीआरपीसी और पुलिस रेगुलेशन में ऐसे संशोधन किए जाएं कि गंभीर मामलों में फरियादी बिना क्षेत्राधिकार के पचड़े में उलझे किसी भी थाने को सूचित करके कार्रवाई की मांग कर सके? क्षेत्राधिकार का मसला जिले का एसपी एक निश्चित समय-सीमा के अंदर निपटाए। पुलिस रेगुलेशन में ही अंतर्निहित प्राविधान होने चाहिए कि एफआईआर दर्ज न करने वाले की न्यूनतम सजा सेवा से बर्खास्तगी होगी। हर बार शोर-शराबे के बाद ही फास्ट ट्रैक कोर्ट की स्थापना क्यों हो? इसके कानूनी प्रावधान होने चाहिए कि स्त्री हिंसा के मामले फास्ट ट्रैक अदालतों में ही सुने जाएं।

निर्भया के समय जो सवाल पूछा गया था, वही इस बार फिर से पूछे जाने की जरूरत है। क्या हैदराबाद में हुई दरिंदगी भारतीय पुरुषों के आचरण और कानूनों में कोई बड़ा बदलाव ला सकेगी?

हमें एक सामूहिक धिक्कार की जरूरत है। चीख-चीखकर कहने की जरूरत है कि हम एक अपराधी समाज हैं, जो अपने दलितों व औरतों के साथ अमानवीय आचरण करते रहे हैं। कहीं ऐसा न हो कि तमाम घटनाओं की तरह हैदराबाद का शर्मनाक वाकया भी हमारी सामूहिक चेतना को अल्प अवधि तक झकझोरने के बाद कुछ दिनों में हमारी स्मृतियों से बिला जाए और हम फिर शुतुरमुर्ग की तरह दोषारोपणों की रेत में गर्दन घुसेड़े, हमारे अपनों के साथ ऐसा कुछ न हो, इस कामना के साथ अगली वारदात की प्रतीक्षा करते रह जाएं।

आशा की केवल एक किरण है। निर्भया के मामले में हमने देखा कि बड़ी संख्या में महिलाएं और नागरिक अधिकार संगठन सड़कों पर आए और सरकार को अनेक सकारात्मक कदम उठाने पड़े। मूल्यों के स्तर पर भी यह छोटी बात नहीं है कि अब ज्यादा लड़कियां बलात्कार की शिकायत लेकर सामने आ रही हैं और ज्यादातर मां-बाप भी उन्हें कोसने की जगह उनके साथ मजबूती से खड़े दिखते हैं। यह बात ज्यादा लोगों की समझ में आ रही है कि बलात्कार के बाद शर्मिंदा पीड़िता को नहीं, अपराधी को होना चाहिए। कामना है कि यही स्वर इस बार और मजबूत हो, तभी वह प्रक्रिया आगे बढ़ेगी, जो निर्भया के साथ शुरू हुई थी।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

राय की राय

विभूति नारायण राय
पूर्व आईपीएस अधिकारी

नश्तर

महंगी कॉलिंग, सोना सस्ता और मन में खटका

जब से मोबाइल पर बातचीत फ्री हुई, जनता संक्षेप में अपनी बात कहना ही भुला बैठी है।

अखबार आया और दरवाजे पर यूं ही पड़ा रहा। कोई खास उत्सुकता ही नहीं थी कि ठंड में ठिठुरते हुए बाहर जाकर उसे उठा लाया जाए। मन में खटका था कि कहीं इसमें से कोई कटखना बिच्छू न निकल आए।

अंततः अखबारी पन्ने खुले, तो उनमें जो सूचनाएं सामने आईं, वे कटखनी प्रजाति की ही थीं। मसलन, मोबाइल पर बातचीत करना 50 प्रतिशत तक महंगा हुआ। रसोई गैस साढ़े 13 रुपये महंगी हुई। बस एक पॉजिटिव खबर दिखी कि एक सरकारी महकमे के जेई ने 37,500 रुपये की रिश्वत मांगी, 20,000 रुपये ग्रहण करता हुआ पकड़ा गया। वह धरा गया, यह बात अलग, लेकिन रिश्वत में उसने इतना रिबेट दे दिया, यह बड़ी बात। सोने के सस्ता होने की भी सूचना मिली। दस ग्राम गोल्ड का भाव पूरे तीन रुपये घटा, तो लगा कि सुनहरी धातु के भाव से जनता को कुछ राहत मिली। इस महंगाई के जमाने में आदमी के जमीर के साथ एक सोना ही है, जो जब-तब नीचे की ओर लुढ़कता रहता है।

अब चिंताजनक बात यह कि साल के आखिरी दिनों में कॉलिंग महंगी हुई। बड़े दिन बीते, जब से मोबाइल पर बातचीत लगभग फ्री हुई, जनता संक्षेप में अपनी बात कहना ही भुला बैठी है। हम हर बात को जब तक दो-तीन बार दोहरा नहीं लेते, तब तक बतकही का सौष्ठव सामने ही नहीं आ पाता। जब तक घटी दरों पर कॉलिंग रही, निठल्लों के बड़े मजे रहे। घरवालियां मोबाइल के जरिए बड़े मजे से अपने साहब की रह-रहकर टोह लेती रहीं। बॉस अधीनस्थों को गाहे-बगाहे सविस्तार धमकाता रहा।

बीत रहे साल में मुल्क की विकास दर घटने से अधिक खौफनाक खबर कॉलिंग महंगी होने की है। विकास तो जैसे-तैसे फिर भी होता रहेगा। सरकार बहादुर जब चाहेंगे, उसके आंकड़े सुधार ही लेंगे। पर नए साल में हैप्पी न्यू ईयर के साथ नवजात नएपन को लेकर घंटों बतियाने वाले आम आदमी को प्राप्त अनिर्वचनीय सुख तो नदारद हुआ। अब झटपट मोबाइल विमर्श के गुर सीखने ही होंगे।

निर्मल गुप्त

साइबर संसार

भावना और इंसाफ

जया बच्चन कह रही हैं कि तेलंगाना कांड के सभी मुजरिमों को सरेराह जला दिया जाए, पब्लिक के हवाले कर दिया जाए। फेसबुकिए कह रहे हैं कि किसी वकील को उन तीनों बदमाशों का केस नहीं लड़ना चाहिए। प्रद्युम्न ठाकुर याद है आपको? रेयान इंटरनेशनल स्कूल में पढ़ने वाला सात साल का बच्चा? 8 सितंबर, 2017 में स्कूल के बाथरूम में प्रद्युम्न का गला रेत दिया गया था। मौके पर ही उसकी मौत हो गई। गुड़गांव पुलिस ने एक एसआईटी बनाई, तीन-तीन डीएसपी ने केस देखा और रिकॉर्ड समय मे एलान कर दिया कि स्कूल बस के कंडक्टर अशोक कुमार ने पहले लड़के का रेप किया और बाद में चाकू से गला रेत दिया। अशोक कुमार को जेल हो गई, बाकायदा पुलिस कमिश्नर ने प्रेस कॉन्फ्रेंस की और अशोक कुमार को खूनी बताया। खट्टर सरकार ने ट्वीट कर खुद को बधाई दी। तब भी जनता पागल हो गई थी। उस कंडक्टर को भी पब्लिक पीटना चाहती थी। उसके चक्कर में कई ड्राइवर-कंडक्टर किस्म के लोग दिल्ली-गुड़गांव में पीटे भी गए। और फिर सीबीआई जांच हुई, तो कंडक्टर अशोक कुमार निर्दोष निकला। प्रद्युम्न की जान उसी के स्कूल के एक छात्र ने ली थी। अशोक बच गया। उसे किसने बचाया? देश की न्यायिक प्रक्रिया ने। भीड़ हिंसा का किसी भी सभ्य समाज में कोई स्थान नहीं है।

पुलिस द्वारा गिरफ्तार हर व्यक्ति गुनहगार नहीं होता, इसलिए न्याय-प्रक्रिया को काम करने दें।

तरुण गोयल की फेसबुक वॉल से

मनसा वाचा कर्मणा

अंतरात्मा की आवाज

लता मंगेशकर अक्सर कहा करती हैं कि उनके जीवन का मूलमंत्र है, 'सिर्फ खुद से डरो। स्वयं से पूछो कि तुम्हारा रास्ता सही है? यदि जवाब हां है, तो बिना दोबारा सोचे, आगे बढ़ते जाओ।' यह मंत्र उनके पिता ने उन्हें दिया था।

कहते हैं कि सफलता के लिए अपनी कसौटी आप ही बनना चाहिए। किसी और से प्रतियोगिता करने की बजाय पहले के स्थापित अपने ही मानदंड को और ऊंचा करते जाओ। हमारे कर्मों के औचित्य को हमारी भीतरी शक्ति ही परखेगी। इस शक्ति को 'अंतरात्मा' माना गया है। प्रायः हम या तो अपने को नाकारा समझते हैं या खुद पर ही मुग्ध हो जाते हैं। आत्मग्लानि और अहंकार, दोनों व्यक्तित्व के विकास में बाधक हैं। किसी भी काम में पूरी ताकत लगा देने से आत्मविश्वास पैदा होता है। तभी अंतरात्मा से सवाल-जवाब करने का विवेक आता है। तो फिर डाकू, भ्रष्टाचारी और हत्यारे में यह आवाज क्या कहती है? वह इनको तामसिक कर्मों से विमुख क्यों नहीं करती? वास्तव में, ये लोग उस सूक्ष्म वाणी को अनसुना कर देते हैं। धिक्कार के स्वर भी उन्हें नहीं सुनाई पड़ते। अहंकार भरे घोष में इस चेतना का कंठ अवरुद्ध हो जाता है। कभी किसी महान आत्मा के संपर्क से ही अंतरवाणी मुखर हो पाती है। भयंकर डाकू अंगुलीमाल जब महात्मा बुद्ध के संपर्क में आया, तभी उसकी क्रूरता विलीन हुई।

महात्मा गांधी इस शक्ति की महत्ता समझते थे। उनका कहना था, 'जब कर्तव्य का संघर्ष हो, तो भीतर बोलने वाली शांत-सूक्ष्म ध्वनि ही सदैव अंतिम निर्णायक होनी चाहिए।' वह यह स्वीकार करते थे कि जब-जब उन्होंने इस आवाज की अवहेलना की, तब-तब उनकी उपयोगिता खत्म हो गई।

कानन झींगन

नजरिया

क्यों जरूरी है अमेरिका के साथ व्यापार समझौता

व्यापार समझौता अमेरिका और अन्य विदेशी निवेशकों को भारत की आर्थिक संभावनाओं के प्रति आश्वस्त करेगा।

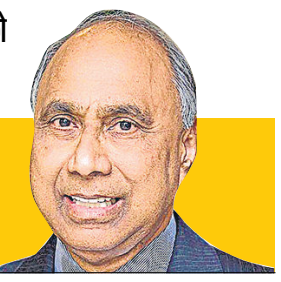

फ्रैंक एफ इस्लाम
वाशिंगटन के भारतवंशी उद्यमी और सिविक नेता

बीते सितंबर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अमेरिका की ऐतिहासिक यात्रा की थी। तब यह कयास लगाए गए थे कि दोनों देशों के शासनाध्यक्ष द्विपक्षीय व्यापार समझौते की घोषणा करने वाले हैं। मगर ऐसे किसी समझौते पर सहमति नहीं बनी। हालांकि बाद के हफ्तों में मीडिया में आई खबरों में कई बार यह बताया गया कि नई दिल्ली और वाशिंगटन व्यापार समझौते के करीब हैं। पर 2019 अब खत्म होने जा रहा है और अब भी ऐसा कोई समझौता आकार नहीं ले सका है।

वैसे, दो हालिया यात्राओं से इस समझौते की उम्मीद फिर से जीवित हुई है। नवंबर के मध्य में भारत के वाणिज्य और उद्योग मंत्री पीयूष गोयल अमेरिकी व्यापार प्रतिनिधि (यूएसटीआर) रॉबर्ट लाइटहाइजर से मुलाकात करने वाशिंगटन पहुंचे थे, और इसके बाद यूएसटीआर कार्यालय का प्रतिनिधिमंडल आगे की बातचीत करने के लिए भारत आया। रिपोर्ट बताती हैं कि दोनों पक्ष सफलता के बिल्कुल करीब हैं। अगर ऐसा कोई समझौता साकार होता है, तो आर्थिक मंदी के इस दौर में भारत निश्चय ही सुकून का अनुभव करेगा। गौरतलब है कि जब से भारत ने मुक्त अर्थव्यवस्था को स्वीकार किया है, अमेरिका के साथ उसके द्विपक्षीय कारोबार शानदार तरीके से आगे बढ़े हैं। वर्ष 1991 में दोनों देशों के बीच लगभग पांच अरब डॉलर मूल्य के उत्पादों का व्यापार होता था, जो पिछले साल तक बढ़कर 88 अरब डॉलर हो गया। साल 2018 में भारत की हैसियत अमेरिका के नौवें सबसे बड़े निर्यात बाजार की थी। पिछले वर्ष तक दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय कारोबार (सेवा-व्यापार जोड़कर) 142 अरब डॉलर का हो गया। हालांकि व्यापार में इतनी भारी बढ़ोतरी का यह अर्थ नहीं है कि दोनों देश तमाम कारोबारी मसलों पर एकराय रखते थे या एकमत हैं। अमेरिका मुख्यतः दो मामलों को लेकर अपनी चिंता जताता रहा है। पहला, तमाम बाजारों तक पहुंच का अभाव व दूसरा, भारत में अमेरिका के बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा। बीते वर्षों में भारत ने इन चिंताओं पर गौर किया है और अमेरिका को कुछ रियायतें दी हैं। नतीजतन पिछले साल अमेरिकी कंपनियों ने यहां 33.5 अरब डॉलर के उत्पाद निर्यात किए और 25.2 अरब डॉलर मूल्य की सेवाएं प्रदान कीं।

राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की मानें, तो ट्रेड-वार यानी व्यापारिक जंग को वह अमेरिकी अर्थव्यवस्था के लिए सुखद मानते हैं। कनाडा, मैक्सिको और चीन के साथ आर्थिक टकराव सुर्खियों में अमूमन रहते ही हैं, ट्रंप ने भारत सहित कई देशों के साथ तनाव के नए मोर्चे खोले हैं। मई में उनके प्रशासन ने भारत को अपनी जीएसपी (वरीयता की सामान्यीकृत प्रणाली) से बाहर कर दिया। इस दर्जे के तहत ही दशकों से भारत कम शुल्क पर अपने कई उत्पाद अमेरिका को निर्यात कर रहा था। जवाब में, भारत ने भी 28 अमेरिकी वस्तुओं पर टैरिफ बढ़ा दिए। कहा जा रहा है कि हालिया बातचीत में दोनों देश दर्जन भर फल व बादाम जैसे उत्पादों के शुल्क में कमी करने पर राजी हुए हैं। अब बड़ी चुनौती कृषि उत्पादों पर समान धरातल तलाशना है, क्योंकि चीन द्वारा अमेरिकी कृषि उत्पादों पर भारी टैरिफ लगाने से अमेरिकी किसानों को हुए नुकसान को लेकर ट्रंप खासा संवेदनशील हैं।

भारत की नजरों से देखें, तो आसन्न समझौते में उसे नुकसान से अधिक फायदा हो सकता है। पहला फायदा तो यह कि देश का आर्थिक माहौल बदल सकता है।

आरसीईपी से बाहर रहने के फैसले के बाद भारत के लिए ऐसे किसी समझौते पर आगे बढ़ना अनिवार्य-सा है।

ज्यादातर रेटिंग एजेंसियों ने भारत के अगले साल के विकास अनुमानों को घटा दिया है। व्यापार समझौता अमेरिका व अन्य विदेशी निवेशकों को भारत की आर्थिक संभावनाओं के प्रति आश्वस्त करेगा। दूसरा, अमेरिका-चीन व्यापारिक युद्ध ने कई अमेरिकी कंपनियों को विनिर्माण यानी मैन्युफैक्चरिंग के लिए वैकल्पिक जगह तलाशने को मजबूर किया। भारत उनकी यह तलाश पूरी कर सकेगा, और आखिरी तथ्य यह कि क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (आरसीईपी) से बाहर रहने के फैसले के बाद भारत के लिए ऐसे किसी समझौते पर आगे बढ़ना अनिवार्य-सा है। आरसीईपी साझीदार देशों की कुल अर्थव्यवस्था अमेरिका व यूरोप की संयुक्त अर्थव्यवस्था को टक्कर देती है। लिहाजा यह भारत के हित में है कि वह अमेरिका के साथ चल रही व्यापार वार्ता को सकारात्मक अंजाम तक पहुंचाए। वैसे भी, एक मजबूत व्यापार समझौते में किसी पक्ष की हार नहीं होती।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मेल बॉक्स

आखिर कब तक

हैदराबाद में एक डॉक्टर के साथ सामूहिक बलात्कार और फिर हत्या की वारदात ने पूर्व की ऐसी बर्बर घटनाओं में एक नया अध्याय जोड़ दिया है। चाहे दिल्ली में निर्भया कांड हो, कश्मीर का कठुआ कांड, उत्तर प्रदेश में उन्नाव कांड या फिर रांची और हैदराबाद के कांड, हर घटना पर देश उबला है। संसद में इस पर तब भी चर्चा हुई थी और आज भी बहस हुई। मगर जब निर्भया कांड हुआ था, तभी अचूक कानून बन गया होता और अपराधियों को फांसी पर लटका दिया गया होता, तो आज निर्भया की मां इंसाफ के लिए नहीं भटकतीं। अगर कुछ खास मामलों की विशेष सुनवाई हो सकती है, तो ऐसे मसले को भी क्यों नहीं सुने जा सकते? हमारे नीति-नियंताओं को इस दिशा में भी सोचना चाहिए, तभी हमारी बेटियां सुरक्षित रह सकेंगी।

मोहम्मद आसिफ, दिल्ली
asif5357@gmail.com

प्याज पर नजर डालिए

इन दिनों देश में प्याज के दाम आसमान छू रहे हैं। हालांकि अपना देश मुख्यतः कृषि प्रधान है, लेकिन सरकार खेती-बाड़ी पर शायद ही ध्यान दे रही है। आखिर कब तक जनता इतना महंगा प्याज खाएगी? पार्टियां चुनाव के वक्त तो खूब भरोसा देती हैं, लेकिन सरकार में आने के बाद वे सब कुछ भूल जाती हैं। देखा जाए, तो राजनीति सिर्फ भरोसे और झूठे वादे से ही चल रही है। ऐसा कतई नहीं होना चाहिए। प्याज के दाम को नियंत्रित करने के लिए सरकार को सख्त कदम उठाना चाहिए। अभी प्याज के साथ-साथ लहसून के दाम भी काफी अधिक हो गए हैं। इन सब पर सख्त फैसला लेना जरूरी है।

मो. जमील
arshadjamil818@gmail.com

किसानों की दुर्दशा

यह खबर पढ़कर बहुत दुख हुआ कि किसान चीनी मिलों को सौ रुपये क्विंटल गन्ना बेचने को मजबूर हो गए हैं। स्पष्ट है कि इस कीमत पर अपनी फसल बेचने से किसानों की लागत भी वापस नहीं आएगी। दुखद तो यह है कि इसके बावजूद सरकार कोई ध्यान नहीं दे रही है। अगर यही हाल रहा, तो गन्ना किसानों का क्या होगा? खबर यह भी है कि कुछ जगहों पर किसान गेहूं बोने के लिए खेत खाली करना चाह रहे हैं, लेकिन चीनी मिल के बंद रहने से वे ऐसा नहीं कर पा रहे। सरकार को जल्द ही किसानों की समस्याओं पर गौर करना चाहिए और उन तक उचित मदद पहुंचानी चाहिए।

हरिश गंगवार
harishkumar5032@gmail.com

कल और आज

शहर के शहर बदल गए, गांव अभी भी वैसे ही हैं/ अमीर और अमीर हो गए, गरीब अभी भी वैसे ही हैं/ लोग पहले अंग्रेजों के गुलाम थे, अंग्रेजी की गुलामी वैसी ही है/ लड़कियां आज मॉडर्न हो गईं, पर रात का डर अभी वैसे ही है/ कब होगा मानसिकता का विकास, मेरा देश विकासशील वैसे ही है।

दीपाली साहू, वाराणसी

सुस्त पड़ा बाजार

भारत अभी मुश्किल आर्थिक दौर से गुजर रहा है, जिसका रास्ता मंदी तक जाता है। पूरा बाजार शांत पड़ा है। सभी के मन में गिरती जीडीपी को लेकर सवाल उठ रहे हैं, मगर जवाब की तलाश अब भी जारी है। इस दौरान सर्वाधिक नुकसान छोटे व्यापारियों और किसानों को हो रहा है। उद्योगपति राहुल बजाज ने मुखर होकर केंद्र सरकार की आलोचना की है। सरकार के रवैये पर तीखा सवाल करते हुए उन्होंने आलोचनात्मक तरीके से अपनी बातें रखीं। अर्थशास्त्री विवेक कौल के अनुसार, यह पिछली 25 तिमाहियों में से सबसे धीमी तिमाही दर है। यह करीब तीन वर्षों से है, परंतु 1991 में आई मंदी का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि अभी मंदी नहीं आई है, केवल जीडीपी दर धीमी हुई है। बेशक आने वाले वक्त में माहौल ठीक हो जाए, पर अभी आशंकाएं यही जताई जा रही हैं कि जीडीपी-दर आगे भी गिर सकती है।

निशा कश्यप, नई दिल्ली
kashyupnisha05@gmail.com

साधारण डाक से पत्र भेजने के अलावा आप ईमेल से भी अपनी राय भेज सकते हैं। ईमेल से 'आपकी राय' भेजने के लिए हमारा पता है- mailbox@livehindustan.com

जनसत्ता

4 दिसंबर, 2019

महंगा परिचालन

अर्थव्यवस्था की सुस्ती को लेकर अभी बहसें चल ही रही हैं कि रेलवे की हालत ठीक न होने के आंकड़े ने सरकार के लिए नई चिंता पैदा कर दी है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक यानी सीएजी ने रिपोर्ट दी है कि 2018-19 के दौरान रेलवे की कमाई और परिचालन खर्च में बहुत कम अंतर था। उसे सौ रुपए कमाने के लिए अट्ठानबे रुपए चौवालीस पैसे खर्च करने पड़े। यह पिछले दस सालों में सबसे अधिक परिचालन खर्च है। यह तब है, जब रेलवे ने पिछले सालों में यात्री और माल भाड़े में बढ़ोतरी की है। इस दौरान कई नई गाड़ियां भी चली हैं। यात्रियों की संख्या बढ़ी है। फिर भी उसकी कमाई और परिचालन खर्च में बहुत कम का अंतर रह गया है, तो यह निस्संदेह चिंता का विषय है। जिस वर्ष का रेलवे के परिचालन पर खर्च का लेखाजोखा पेश किया गया है, उस वर्ष उसने अपनी कुछ ग्राहक कंपनियों से अग्रिम शुल्क ले रखा था, वरना उसके लिए अपना खर्च संभालना मुश्किल होता। इसलिए सीएजी ने सुझाव दिया है कि रेलवे को अपनी आंतरिक आय बढ़ाने के उपायों पर ध्यान देना चाहिए, ताकि सकल बजटीय प्रावधान पर निर्भर न रहना पड़े।

रेलवे की कमाई का सबसे बड़ा स्रोत माल ढुलाई है। उसके बाद यात्री भाड़ा और फिर कुछ आमदनी रेलवे स्टेशनों पर व्यावसायिक गतिविधियों के लिए दी गई जगहों के किराए से हो जाती है। पिछले कई सालों से रेलवे को विश्वस्तरीय सुविधाओं से लैस करने का दम भरा जा रहा है। इसमें रेलवे स्टेशनों की मरम्मत, गाड़ियों की रफ्तार बढ़ाने और उनमें सुरक्षा और यात्री सुविधाएं बेहतर बनाने का संकल्प दोहराया जाता रहा है। ऐसे में जाहिर है कि परिचालन खर्च बढ़ने से रेलवे के लिए इन पक्षों पर आगे कदम बढ़ाने के लिए काफी सोचना पड़ेगा। पहले ही नई पटरियां बिछाने, पुराने पुलों की जगह नए पुल बनाने, रेल लाइनों के विद्युतीकरण, गाड़ियों में टक्कररोधी उपकरण लगाने आदि जैसी रेलवे की अनेक परियोजनाएं लंबे समय से लटकी पड़ी हैं। कमाई न हो पाने से नई परियोजनाएं शुरू करना तो दूर, रुकी हुई परियोजनाओं को गति दे पाना ही कठिन होगा।

रेलवे की कमाई घटने की कुछ वजहें समझी जा सकती हैं। इसका सीधा संबंध अर्थव्यवस्था की सुस्ती से है। छिपी बात नहीं है कि औद्योगिक क्षेत्र का उत्पादन काफी घटा है। वाहन और कपड़ा उद्योग जैसे कई क्षेत्रों पर आर्थिक मंदी की बहुत बुरी मार पड़ी है। स्वाभाविक ही इससे रेलवे की माल ढुलाई पर असर पड़ा है, जो कि उसकी कमाई का बड़ा जरिया है। यानी जब तक औद्योगिक क्षेत्र में तेजी नहीं आती, रेल के पहियों में भी सुस्ती बनी रहेगी। जाहिर है, इस सुस्ती से पार पाने के लिए रेलवे को कुछ कठोर कदम उठाने होंगे। उनमें से पहला कदम यही हो सकता है कि वह अपने भाड़े और किराए में बढ़ोतरी करे। मगर इसका सीधा असर मुसाफिरों पर पड़ेगा। लोग पहले ही महंगाई से परेशान हैं, रेल भाड़े में बढ़ोतरी उन पर अतिरिक्त बोझ साबित होगी। यों रेलवे कई स्टेशनों के रखरखाव की जिम्मेदारी निजी हाथों को सौंप रहा है। उससे उसका खर्च कुछ कम हो सकता है। मगर मुसाफिरों की जेब पर उसका भार पड़ने से इनकार नहीं किया जा सकता। रेलवे सार्वजनिक परिवहन का बड़ा तंत्र है, अगर उसकी स्थिति सुधारने का प्रयास जल्दी नहीं किया गया, तो यह सरकार की बड़ी विफलता साबित होगी।

हादसों की सड़क

राज्यसभा में सोमवार को प्रश्नकाल के दौरान सड़क हादसों पर जो तस्वीर सामने रखी गई, उससे फिर यह सवाल उठा है कि क्या केवल कानूनों को ज्यादा सख्त बनाना किसी मसले से निपटने का अकेला जरिया हो सकता है! करीब चार महीने पहले ही सरकार ने हादसों में कमी लाने के मकसद से सड़क सुरक्षा के लिए कठोर प्रावधानों से लैस मोटर वाहन (संशोधन) विधेयक को मंजूरी दी थी। मकसद यही था कि कानूनी सख्ती से लोगों में वाहन चलाते समय भय काम करेगा और इस तरह सड़क दुर्घटनाओं पर काबू पाया जा सकेगा। मगर हकीकत यही है कि लोग वाहन चलाते समय मनमानी करते हैं और कानूनी सख्ती का भय उनमें कम ही होता है। ऐसे चालकों की संख्या काफी है, जो यातायात नियमों का पालन करना अपनी शान के खिलाफ और मनमाने तरीके से गाड़ी चलाना अपना अधिकार समझते हैं। पर सवाल है कि इस तरह की गैरजिम्मेदारी और लापरवाही से वाहन चलाने का हासिल आखिर क्या है?

सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने राज्यसभा में कहा कि पिछले साल के मुकाबले इस साल सड़क हादसों में मामूली कमी दर्ज की गई है, लेकिन अफसोसजनक है कि जितनी भी दुर्घटनाएं हुईं, उनमें मरने वाले लोगों की संख्या में बढ़ोतरी दर्ज की गई। उनके मुताबिक इसकी मुख्य वजह सड़क इंजीनियरिंग संबंधी खामियां हैं। उनका यह आकलन सही हो सकता है। सड़क पर जो लोग वाहन चलाते हैं, उन्हें उन खामियों के मद्देनजर सावधानी बरतनी चाहिए। लेकिन क्या यह जरूरी नहीं था कि अगर सड़कों में ही ऐसी गड़बड़ियां हैं, जो हादसों की वजह बनती हैं, तो उनके बारे में हर स्तर पर जागरूकता फैलाई जाए, जानकारी सार्वजनिक की जाए, ताकि लोग सावधानी बरतें? सड़कों पर ऐसी कई जगहें होती हैं, जहां विशेष सावधानी बरतने की सलाह दी जाती है, सड़क किनारे बोर्ड पर निर्देश भी लिखा होता है, लेकिन कई वाहन चालकों को उन निर्देशों पर गौर करना जरूरी नहीं लगता। जबकि बेहद मामूली लापरवाही भी बड़े हादसे की वजह बन जाती है और उसमें लोगों की नाहक जान चली जाती है। पिछले साल जनवरी से सितंबर के बीच देश भर में होने वाले सड़क हादसों में कुल एक लाख बारह हजार चार सौ उनसठ लोगों की मौत हो गई और साढ़े तीन लाख से ज्यादा लोग घायल हुए।

विचित्र है कि भारत में दुनिया भर के कुल वाहनों का केवल तीन फीसद है, लेकिन सड़क हादसों में मरने वालों की तादाद के मामले में यह अव्वल है। दरअसल, एक बड़ी विडंबना वाहन चलाने वालों के भीतर खुद है। तय रफ्तार के नियम का पालन करना, शराब पीकर वाहन न चलाना, लेन में रहना, वाहन चलाते समय सजग रहना जैसे कुछ यातायात नियमों का ही पालन कर लिया जाए, तो सड़क हादसों में काफी कमी लाई जा सकती है। फिर दुर्घटना की स्थिति में अगर सरकार समय पर घायलों को इलाज मुहैया कराने की व्यवस्था कर दे, तो बहुत सारे लोगों की जान बचाई जा सकती है। इसके अलावा, वाहन चालकों को यह समझने की जरूरत है कि नियमों का पालन न केवल सुचारु यातायात व्यवस्था के लिए जरूरी है, बल्कि सड़क पर चलने वाले अन्य लोगों के साथ-साथ खुद का जीवन भी सुरक्षित रहने के लिहाज से अनिवार्य है। अच्छी सड़कें आधुनिक यातायात व्यवस्था के लिए जरूरी हैं, लेकिन उन पर वाहन चलाने का सलीका अगर न हो तो वही सड़कें जानलेवा साबित हो जाती हैं।

कल्पमेधा

किसी देश की शक्ति छोटे विचारों के बड़े आदमियों से नहीं, बल्कि बड़े विचारों के छोटे आदमियों से बनती है।
-स्वामी रामतीर्थ

उम्र घटाती रोशनी

अखिलेश आर्येंदु

लोगों को यह भी नहीं मालूम कि आंखों को चौंधिया देने वाली ये बत्तियां उनकी उम्र को कम करने की वजह बन रही हैं। लोगों के लिए तो पार्कों, गलियों और सड़कों पर बत्तियों का होना विकास का पैमाना है। मगर इस तथाकथित विकास के पैमाने में उनकी जिंदगी का पैमाना गड़बड़ा रहा है, यह किसी को नहीं मालूम।

वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण और मृदा प्रदूषण से पैदा होने वाली समस्याओं से लोग वाकिफ हैं। इनके चलते होने वाली बीमारियां पहले ही चुनौती बनी हुई हैं। इनका असर खेती-किसानी से लेकर सामान्य जन-जीवन पर पड़ रहा है। इसलिए इन प्रदूषणों को कम करने की कवायदें भी विश्व स्तर पर जारी हैं। मगर प्रकाश प्रदूषण से होने वाली समस्याओं के बारे में लोग नहीं जानते या इस तरफ अभी अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। शायद इसलिए कि दूसरे प्रदूषणों की तरह इस प्रदूषण के प्रभाव भयावह रूप नहीं ले पाए हैं। इसलिए इस खतरे के प्रति लोग आंख मूंदे हुए हैं।

दक्षिण कोरिया स्थित सियोल नेशनल यूनिवर्सिटी में एसोसिएट प्रोफेसर क्यॉग-बोक मिन के मुताबिक रात में बाहरी यानी आउटडोर और कृत्रिम प्रकाश की तीव्रता का नींद की दवाओं से गहरा रिश्ता है। अध्ययन के मुताबिक रात में घर के बाहर के तेज प्रकाश का असर नींद पर पड़ता है। इससे अनिद्रा की समस्या बढ़ रही है। इसलिए लोग नींद के लिए दवाओं का सेवन करते हैं। इससे लोगों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में जबर्दस्त कमी देखी जा रही है और लोगों की औसत आयु में कमी आ रही है।

प्रकाश प्रदूषण एक ऐसी नई समस्या है, जिसका समाधान निकट भविष्य में संभव नहीं दिखाई देता, बल्कि इस समस्या के दिनोंदिन और बढ़ने के आसार हैं। इसकी वजह यह है कि लगातार नए-नए शहर बसाए जा रहे हैं। शहरों में सुरक्षा-व्यवस्था ठीक रहे, इसलिए सड़कों, पार्कों, व्यावसायिक परिसरों में ऊंचे खंभों पर तेज रोशनी वाली बत्तियां उपयोग की जाने लगी हैं। इसके अलावा जगह-जगह तेज चमक बिखेरने वाले होर्डिंगों और साइनबोर्डों का चलन बहुत तेजी से बढ़ रहा है। चकाचौंध कर देने वाली ये लाइटें सेहत पर किस तरह और कितना असर डाल रही हैं, इस पर नगरपालिका या सरकार को सोचने का वक्त नहीं है। आमतौर पर आम लोग इस बाबत सोचते ही नहीं हैं। बल्कि सड़कों और घरों के बाहर गलियों में अगर बत्तियां न हों, तो उसके लिए आंदोलन तक पर उतर आते हैं। लोगों को यह भी नहीं मालूम कि आंखों को चौंधिया देने वाली ये बत्तियां उनकी उम्र को कम करने की वजह बन रही हैं। लोगों के लिए तो पार्कों, गलियों और सड़कों पर बत्तियों का होना विकास का पैमाना है। मगर इस तथाकथित विकास के पैमाने में उनकी जिंदगी का पैमाना गड़बड़ा रहा है, यह किसी को नहीं मालूम। यहां तक कि पढ़े-लिखे लोग भी तेज रोशनी को ही तरक्की का पर्याय मानते हैं।

अनेक अध्ययनों से यह तथ्य बहुत पहले सामने आ चुका था कि शहरों, पर्यटन स्थलों, जंगल सफारी आदि में रात को जलने वाली तेज बत्तियों की वजह से वहां रहने वाले पक्षियों और दूसरे वन्य जीवों के स्वाभाविक जीवन चक्र पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। उनकी नींद में बाधा उत्पन्न होती है, इससे उनकी प्रजनन क्षमता घट रही है। इस वजह से अनेक पक्षियों और वन्य जीवों की प्रजातियां नष्ट हो रही हैं। मगर उन अध्ययनों के निष्कर्षों को बहुत गंभीरता से नहीं लिया गया। फिर यह सोचने की जरूरत नहीं समझी गई कि अगर वन्य जीवों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ रहा है, तो मनुष्य पर भी जरूर कुछ प्रभाव पड़ता होगा। मगर चकाचौंध को विकास का पर्याय मानने वाली व्यवस्थाओं ने इसे कोई गंभीर समस्या नहीं माना।

यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो के एनर्जी पॉलिसी इंस्टीट्यूट के निदेशक और अर्थशास्त्री प्रो माइकल ग्रीनस्टोन के मुताबिक वैश्विक आबादी का पचास फीसद या 5.5 अरब लोग ऐसे क्षेत्रों में रहते हैं, जहां प्रदूषण की समस्या डब्ल्यूएचओ द्वारा निर्धारित सीमा को पार कर गई है। गौरतलब है कि भारत और चीन में दुनिया की छत्तीस प्रतिशत आबादी रहती है। दोनों देशों में वायु, ध्वनि, जल, मृदा और प्रकाश प्रदूषण की समस्या विकराल रूप धारण कर चुकी है। एक सर्वेक्षण के मुताबिक इन दोनों देशों में रहने वाले लोगों की औसत उम्र में तिहत्तर फीसद की कमी आई है। उड़ती धूल से जहां सिर दर्द, बुखार, नेत्ररोग, चर्मरोग, श्वासरोग और एलर्जी जैसी समस्याएं विकट होती जा रही हैं, वहीं पर प्रकाश प्रदूषण के कारण अनिद्रा, नेत्ररोग, हृदयरोग और मानसिक रोग लगातार बढ़ते जा रहे हैं। जिस प्राकृतिक प्रकाश को जिंदगी का कभी सहचर माना जाता था, वह जब कृत्रिम रूप से हमारी जिंदगी का हिस्सा बनता है, तो हमारे लिए समस्या पैदा करने वाला बन जाता है, नए शोध और सर्वेक्षण तो यही कह रहे हैं।

इसी तरह मृदा प्रदूषण से, जिसमें उड़ती धूल की समस्या सबसे ज्यादा है, सब्जियों, फलों, खाद्यान्न और दूसरी खेत में पैदा होने वाली वस्तुएं प्रदूषित हो रही हैं। ऐसी वस्तुओं के सेवन से पेट, मस्तिष्क, त्वचा, आंख, किडनी, लीवर पर अत्यंत घातक असर पड़ रहा है। असमय में समाज के हर आयु वर्ग का व्यक्ति बीमारी से ग्रस्त होने लगा है। कुछ साल पहले यह अध्ययन भी सामने आया था कि गंगा और यमुना जैसी नदियों के प्रदूषित होते जाने की वजह से उनके किनारे के गांवों में मृदा प्रदूषण तेजी से बढ़ा है और उसके चलते वहां कई तरह की बीमारियां खतरनाक स्तर तक बढ़ गई हैं।

वैज्ञानिकों के मुताबिक हवा में प्रदूषण और आर्द्रता बढ़ने से वातावरण में 2.5 पीएम के सूक्ष्म कण, ओजोन, नाइट्रेट, सल्फेट और कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा ज्यादा है। प्रदूषण और आर्द्रता से ग्राउंड लेबल पर ओजोन का स्तर बढ़ रहा है। इससे नाक और सांस की नलिकाओं में सूजन और संक्रमण की शिकायत बढ़ रही है जिससे लोग खांसते-खांसते परेशान हैं। प्रदूषण और आर्द्रता बढ़ने से फोटो केमिकल स्मॉग भी बन रहा है। प्रो जेवी सिंह के मुताबिक फोटो केमिकल स्मॉग में निचली स्तह पर ओजोन की मात्रा लगातार बढ़ रही है। यह ओजोन नाक और सांस की नलिकाओं के म्यूकस (द्रव्य पदार्थ) को नुकसान पहुंचा रही है। इससे आम लोगों में सांस की नलिकाओं में सूजन और संक्रमण हो रहा है। प्रदूषण से अस्थमा और क्रानिक ऑब्सट्रक्टिव पल्मोनरी डिजीज (सीओपीडी) से पीड़ित मरीजों की सांस उखड़ने लगी है।

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या जिस तरह विकराल रूप धारण कर रही है, उससे लगता है कि कुछ ही सालों में विकासशील देशों में रहने वाले लोगों की औसत उम्र में और भी कमी आएगी। आमतौर पर शहरों में रहने वालों को प्रदूषण की समस्या से दो-चार होना पड़ता है, लेकिन अब गांवों और छोटे कस्बों में भी प्रदूषण की समस्या से लोगों को तरह-तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। भारत के अनेक प्रदेशों के किसानों द्वारा पराली जलाने से वायु प्रदूषण, डीजे के शोर से ध्वनि प्रदूषण और उड़ती धूल के कणों से पर्यावरण पर प्रतिकूल असर देखने को मिल रहा है। यही वजह है कि गांवों में रहने वाले लोग उन बीमारियों की चपेट में आते जा रहे हैं, जो आमतौर पर शहरों की मानी जाती थीं।

पराली जलाने से हवा और सेहत तो चौपट हो ही रही है, जमीन की उर्वरा-शक्ति में जबर्दस्त कमी देखी जा रही है। सर्वेक्षण के मुताबिक भूमि में अस्सी फीसद तक सल्फर, नाइट्रोजन और बीस फीसद अन्य पोषक तत्त्वों की कमी आई है। इसके अलावा जमीन में मौजूद 'मित्रकीट' नष्ट हो रहे हैं। कीटों का प्रकोप गांवों में बहुत तेजी के साथ बढ़ रहा है और भूमि की जल धारण क्षमता में कमी आ रही है। इस पर गौर करने की जरूरत है। शहरों में घरों और कारखानों का कचरा और गांवों में पराली दोनों पर्यावरण की बर्बाद कर रहे हैं। प्रकाश प्रदूषण की बढ़ती समस्या पर काबू पाने के उपाय जरूरी हो गए हैं।

जैसे को तैसा नहीं

एकता कानूनगो बक्षी

दुनिया मेरे आगे

कई साल बाद एक पुरानी दोस्त से मिली। वह कॉलेज के दिनों में अपने अच्छे स्वभाव, चुस्त-दुरुस्त स्वास्थ्य के कारण सबकी चहेती हुआ करती थी। आज जब उससे मिलने एक रेस्टोरेंट में जा रही थी तो यही सोच रही थी कि उससे मिल कर बीते दिनों को याद करके हम खूब ठहाके लगाएंगे और सकारात्मक ऊर्जा से भर उठेंगे। लेकिन वहां पहुंचने के बाद हुआ इससे बिल्कुल अलग। इतने वर्षों बाद वह पूरी तरह बदली हुई नजर आई। उसके चेहरे की चमक और देहयष्टि में तो अंतर आया ही था, स्वभाव भी एकदम भिन्न महसूस हुआ। रेस्टोरेंट के वेटर को ही छोटी-सी बात पर दो बार डांट चुकी थी। आखिर मैंने उससे पूछा- 'तुम इतना बदल कैसे गईं, ऐसी तो नहीं थी कभी?'

इस पर उसने मेरी तरफ बहुत अचंभित भाव से देखते हुए कहा- 'क्या कह रही हो? मैं तो वैसी ही हूं... शायद और परिपक्व हो गई हूं। पहले नासमझ थी। जीवन में आड़े-टेढ़े लोगों और उतार-चढ़ाव भरे रास्ते पर सीधा चलना भी आ गया और लोगों को सीधा करना भी आ गया है अब मुझे। हर हाल में पहले से बेहतर हूं।' यह कह कर वह कुछ व्यथित-सी हो गई तो मैंने बात को बदल दिया। मैंने सोचा कि दूसरों से लड़ते-झगड़ते उसने खुद को ही शायद उलझा लिया है।

मुझे लगता है 'जैसे को तैसा' की कहावत को गलत तरह से समझने से हमें बचना चाहिए। यह सोचना कि किसी ने हमारा बुरा किया तो हम भी उसके साथ बुरा करेंगे, गलत है। उसकी प्रकृति से वह खुद ही अपने लिए दुख के बीज बो रहा है। सामने वाले के जैसा सम व्यवहार करके हम खुद की प्रकृति को भी अनजाने में बदल रहे होते हैं। इसके विपरीत असल में हमें वैसा व्यवहार करना चाहिए जैसा हम दूसरों से अपने लिए उम्मीद करते हैं। ऐसे में कम से कम हम एक आदर्श व्यवहार का उदाहरण तो अप्रत्यक्ष रूप से सामने वाले को दे ही रहे होते हैं, जो कहीं न कहीं उसके मन को जरूर स्पर्श करेगा। इसके अलावा, दूसरे को सबक सिखाने के चक्कर में अपनी ऊर्जा और समय गंवाने से अच्छा है, वह समय और ऊर्जा खुद को बेहतर बनाने में लगाई जाए।

मेरी दोस्त की तरह ही मनुष्य के व्यवहार में बदलाव होने के कई ऐसे उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं, जिनके चलते व्यक्ति का भविष्य पूरी तरह बदल सकता है। जब कभी कोई दिशाहीन हो जाता है तो उसे अच्छी सलाह, अच्छे वातावरण और अच्छी किताबों के जरिए सही मार्ग पर सफलतापूर्वक लाया जा सकता है। कई पुनर्वास केंद्र इस तरह के काम में संलग्न हैं जो अनेक परेशान लोगों में उमंग और नई उम्मीद जगाने का महत्त्वपूर्ण काम करते रहे हैं।

जब कभी हमारा सामना ऐसे लोगों और वातावरण से हो, जहां संवाद, आचरण और समझ का स्तर कमतर, संकुचित लगे, तब हमें उसी स्तर तक जाने से बचना चाहिए। बल्कि ऐसे में अपने विचारों की श्रेष्ठता, व्यावहारिक और विनम्र आचरण के आदर्श स्थापित कर उस दूषित, कटु वातावरण को बेहतर बनाने का प्रयास करना उचित कहा जा सकता है। जहां विचार अशुद्ध है और सत्य का अभाव होता है, अक्सर वहां संवाद आक्रामक और आवाज बुलंद होती है। वहीं जहां ज्ञान और विवेकशीलता होगी, वहां बड़े-बड़े मसले भी बहुत शांति और विनम्रता से हल हो जाते हैं।

ऐसी बात नहीं है कि वाद-विवाद, मतभेद हमेशा ही विध्वंसकारी या घातक होते हैं। विवेकपूर्ण बहसों, विमर्शों और विचारों के मंथन से ही आखिर में कुछ बेहतर निकल कर आता है। पर जब वाद-विवाद, स्वार्थ, गुस्से और अहंकार से दूषित हो जाए और हर व्यक्ति आत्मकेंद्रित हो जाए, नए नजरिये का स्वागत न हो, तो वह सिर्फ कलह कहा जाएगा। वह घातक है। वहां सब कुछ एकतरफा होता जाता है। जहां किसी भी बात के समर्थन या पुष्टि के लिए वास्तविक और तर्कसंगत तथ्यों का उपयोग नहीं होता, वहां अक्सर एक हंगामा और एक-दूसरे पर दोषारोपण होता रहता है। भूत और भविष्य को लेकर आपसी खींचतान, छीछालेदारी से निरर्थक क्लेश पैदा होने लगता है। ऐसे में अपनी ठीक बात रखना भी व्यर्थ हो जाता है। उस समय खुद को मौन रखना या सही समय का इंतजार करना ही हितकर हो सकता है।

अक्सर देखा गया है कि ज्यादातर विवाद गलत शब्दों के चयन, बोलने के तरीके और हमारी भाव-भंगिमा से ही बढ़ जाते हैं। ऐसे में हमारा सचेत रहना तो जरूरी है ही, सकारात्मक सोच, सही आचरण और अन्य की मनःस्थिति को समझने का प्रयास काफी हद तक परिस्थिति को बेहतर कर सकता है। हमारा परिपक्व और विनम्र व्यवहार ही हमें उस कठिन रास्ते से पार लगा सकता है।

कहीं आग लगती है तो हम उस पर पानी डालते हैं और उससे खुद को बचाने का प्रयास भी करते हैं। यही रवैया हमें अपने जीवन में भी रखना शायद बहुत जरूरी है। हर मिजाज के लोग हमें हर रोज मिलते हैं। उनके स्वभाव को हमें अपने पर हावी नहीं होने देना चाहिए। 'जैसे को तैसा' व्यवहार के बजाय अपने सहज और विनम्र स्वभाव के साथ युक्तिसंगत और विवेकपूर्ण व्यवहार शायद एक उचित पहल होगी।

अपराध और दंड

हैदराबाद में पशु चिकित्सक युवती से बलात्कार और उसकी हत्या की घटना से देश में गुस्से का माहौल है। होना भी चाहिए, आखिर आधी आबादी की सुरक्षा का सवाल है। लेकिन इस सबके बाद खबरिया टीवी चैनलों में एक चर्चा शुरू हुई कि क्या बलात्कार करने वाले को भीड़ के हवाले कर दिया जाए या भारत में अरब देशों जैसे कानूनों को लाया जाए जिसके तहत मुजरिम का सर काट दिया जाता है। ये गुस्से से उपजी प्रतिक्रियाएं हो सकती हैं लेकिन कानूनसम्मत और व्यावहारिक नहीं।

हमें ऐसे बयान देते वक्त सिर्फ एक पहलू को नहीं देखना चाहिए, यह गैरजिम्मेदाराना है। अगर हम अरब देशों के नियम-कानूनों को लागू करने की बात करते हैं तो हमें यह भी जान लेना चाहिए कि कई अरब देशों में महिलाओं के साथ दूसरे दरजे के नागरिकों जैसा व्यवहार किया जाता है। सऊदी अरब में महिलाओं को बिना पुरुष के निकलने की आजादी के लिए एक अभियान चलाना पड़ा था। अरब देशों में महिलाओं को अपनी आजादी के लिए समय-समय पर लड़ना पड़ता है लेकिन इसके विपरीत भारत ऐसा लोकतंत्र है जहां महिलाओं को बराबर को अधिकार दिए गए हैं। हम उनसे भारत की तुलना या भारत में उन देशों के नियमों को लागू नहीं कर सकते जहां मुजरिम को पत्थर से मार देने का कानून सिर्फ पुरुषों के लिए नहीं बल्कि महिलाओं के लिए भी लागू है। क्या हम इसके लिए तैयार हैं?

अभिप्राय यह नहीं कि बलात्कारियों को सजा न मिले, लेकिन देश में हम आरोप सिद्ध होने का इंतजार किए बिना ही कैसे किसी को भीड़ के हवाले कर सकते हैं या मार सकते हैं? नगालैंड, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के अलग-अलग तीन ऐसे मामलों में आरोपित को भीड़ ने निर्ममता से मार दिया था लेकिन बाद में जांच में उन तीनों के निर्दोष होने की बात सामने आई। ऐसे किसी निर्दोष की हत्या हम कैसे होने दे सकते हैं?

बलात्कारियों को मृत्युदंड एक अच्छा प्रस्ताव है लेकिन न्यायिक प्रक्रिया के अंतर्गत हो और इसी प्रक्रिया में तेजी लाने की आवश्यकता है। आरोप सिद्ध होने के दो माह के अंदर दोषियों को फांसी की सजा हो, यही न्याय होगा। सरकारों और न्यायपालिका को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि बलात्कार के मामलों में तेजी से सुनवाई हो। न्यायिक प्रक्रिया में जब तक तेजी नहीं आएगी, बलात्कारियों के मन में कानून का भय व्याप्त नहीं होगा।

● *अभिषेक सिंह, शाहजहांपुर, उत्तर प्रदेश*

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com

विनिवेश के बजाय

आर्थिक सुधार के मोर्चे पर एक बड़ा कदम बता कर सरकारी कंपनियों का विनिवेशीकरण मौजूदा सरकार की प्राथमिकताओं में दिखता है। पर क्या इससे वास्तव में हमारी अर्थव्यवस्था में सुधार होगा या कंपनियों की कार्यप्रणाली सुधरेगी? इसकी जांच करने पर हम पाते हैं कि विनिवेश के तहत कुछ प्रतिशत शेयर बेच देने से कोई विशेष फर्क पड़ने वाला नहीं है। अगर पूरी तरह से इनका स्वामित्व निजी कंपनियों के हाथों में भी दे दिया जाए तो कई सारी समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। कर्मचारियों के हितों का हनन तो होता ही है, उनकी नौकरी तक पर खतरा उत्पन्न हो जाता है।

यह निजीकरण और विनिवेश एक ऐसे माहौल में हो रहा है जब देश में बेरोजगारी एक बड़े संकट के रूप में मौजूद है। साथ ही पूंजी की भारी कमी है, घरेलू कंपनियां घाटे में चल रही हैं, कर्ज में डूबी हैं और बैंकों की हालत भी ढीली है। अपेक्षित कर-संग्रह में सरकार विफल रही है जिसके कारण उसे बार-बार कर जमा करने और सब्सिडी छोड़ने की अपील करनी पड़ती है।

सार्वजनिक कंपनियों की जमीन पर नजरें गड़ाए उद्योगपतियों को ध्यान में रख कर लाभ देने वाले उपक्रमों की भी बिक्री से पैसा उगाही कर सरकार वाहवाही तो लूट सकती है लेकिन इससे आर्थिक संकट और बढ़ेगा ही। तात्कालिक कदम से ज्यादा भविष्य को ध्यान में रख कर फैसला लिया जाना चाहिए। जिम्मेदारियों से भागने की जगह सरकार इन कंपनियों के बेहतर प्रदर्शन पर काम करे। केवल पूंजी उत्पादन पर ध्यान देने से आर्थिक विषमता को और बढ़ावा ही मिलेगा।

● *विशाल कुमार शर्मा, मोतिहारी, बिहार*

अवसरवादी राजनीति

आजादी के कुछ वर्ष बाद ही अवसरवादी राजनीति ने अपना क्रूर पंजा फैलाना शुरू कर दिया था, लेकिन हाल के दिनों में इसका प्रभाव अधिक देखने को मिल रहा है। वैसे तो इसके लिए किसी दल विशेष को जिम्मेदार ठहराना उचित नहीं है, क्योंकि आज के राजनीतिक वातावरण में कोई भी दल पूरी तरह बेदाग नहीं है। इसी का नतीजा पिछले दिनों महाराष्ट्र की राजनीति में देखने को मिला। यदि सभी राजनीतिक पार्टियां प्रयास करें तो इस प्रकार की अवसरवादी राजनीति से मुक्ति मिल सकती है।

● *कपिल एम वडियार, पाली, राजस्थान*

साधन की पवित्रता

विषबेल रूपी कई बाबा जब अंकुरित होते हैं, उस दौरान ही इन्हें राजनेताओं से प्रश्रय मिलने लगता है। फिर इनकी काया इतनी विशाल हो जाती है कि इन्हें पालने-पोसने वाले नेता और धर्म के नाम पर तरह-तरह के व्यापार करने वाले लोग खुद को इनके आगे बौना महसूस करने लगते हैं और इनकी कृपादृष्टि पाने के लिए व्यग्र नजर आते हैं। मेरे जैसा सामान्य इंसान किशोरावस्था से यह समझ गया था कि वासनाओं की पूर्ति के लिए कुछ अपराधी प्रवृत्ति के लोग भी गुरु या संत का चोला धारण करते हैं। आखिर रावण ने भी तो सीताजी का विश्वास जीतने के लिए ऐसा ही किया था! फिर समझ नहीं आता कि लाखों-करोड़ों लोगों को उल्लू बनाने वाले नेता इनके सामने उल्लू क्यों नजर आते हैं?

मुझे नहीं लगता कि जिस व्यक्ति पर बलात्कार, अपहरण और हत्या के मुकदमे चल रहे हों, उसके साथ खड़े होकर किसी नेता को अपनी बत्तीसी दिखानी चाहिए। सत्ता पाने के लिए यदि ऐसे भ्रष्ट तरीके अपनाने पड़ते हैं तो फिर सत्ता पाकर हम आखिर कैसे पवित्र रह सकते हैं? कुछ महीने पहले एक नेता अपनी विजय के उपलक्ष्य में बलात्कार के आरोपी एक नेता को धन्यवाद देने जेल गए थे। उनकी पार्टी को उन पर कार्रवाई करनी चाहिए थी। गांधीजी को मानने वाले नेता यह भूल जाते हैं कि बापू लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमेशा साधन की पवित्रता पर जोर देते रहे। अमीरों की थैलियों के सहारे राजनीति करने वाले यह भूल जाते हैं कि देश की जनता को बेवकूफ बनाना अंततः उन्हें और देश को महंगा पड़ सकता है।

● *सुभाष चंद्र लखेड़ा, द्वारका, नई दिल्ली*

www.readwhere.com

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। बुधवार, 4 दिसंबर 2019

सिर पर खड़ा संकट

दुनिया भर के पर्यावरणविदों और पर्यावरण कार्यकर्ताओं के साथ आम आदमी की भी नजर मैड्रिड में हो रहे वार्षिक संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (कॉप 25) पर टिकी है। इसे पेरिस संधि पर अमल का सम्मेलन बताया जा रहा है। बैठक का मुख्य मुद्दा यही है कि किस तरह धरती का तापमान 2 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा न बढ़ने दिया जाए। इसके अलावा विकासशील और विकसित देशों के बीच सामंजस्य बनाने के रास्तों पर भी चर्चा होगी। देखना है, सम्मेलन अपने इस मकसद में किस हद तक कामयाब हो पाता है। बीते सोमवार को शुरू हुआ यह सम्मेलन दो हफ्ते चलेगा। इसका आयोजन इस बार लैटिन अमेरिकी देश चीले में होने वाला था, लेकिन वहां लंबे समय तक चले सरकार विरोधी प्रदर्शनों के कारण इसे स्पेन में कराया जा रहा है। कुछ समय पहले विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यूएमओ) की एक रिपोर्ट 'द स्टेट ऑफ द ग्लोबल क्लाइमेट' में कहा गया था कि राजनेताओं के रवैये के कारण पेरिस संधि का लक्ष्य निर्धारित समय पर तो क्या, देर से भी पूरा होना कठिन है। यही कारण है कि हालात सुधरने के बजाय दिनोंदिन और बिगड़ते ही जा रहे हैं। रिपोर्ट के मुताबिक कार्बन उत्सर्जन में कमी न आ पाने के चलते ही बीते पांच साल धरती के दर्ज इतिहास में पांच सबसे गर्म सालों के रूप में छप गए हैं। इसका एक दुष्परिणाम यह भी है कि हमारे महानगर लगातार गैस चैंबर में तब्दील होते जा रहे हैं और कहीं सूखा कहीं बाढ़ का सिलसिला दैनंदिन खबरों का हिस्सा बन गया है। ऐसी रिपोर्टों से लोगों में भय है और इसके प्रभाव में लोग एकजुट भी होने लगे हैं। उनमें यह सहमति बनती जा रही है कि ट्रंप या दूसरे राजनेता चाहे जो कहें, पर्यावरण बचाने की मुहिम रुकनी नहीं चाहिए वरना हम सबका जीना मुहाल हो जाएगा। कॉप 25 का यह सम्मेलन इस दृष्टि से बेहद अहम है। सम्मेलन से पहले संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंतोनियो गुतारेस ने कहा कि जलवायु परिवर्तन अब कोई भविष्य की समस्या नहीं है, वैश्विक स्तर पर हम अभी ही जलवायु संकट का सामना कर रहे हैं। उन्होंने इस बात पर चिंता प्रकट की कि वैश्विक तापमान कम करने के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं हो पा रहे। पेरिस समझौते के संकल्प पूरे कर लिए जाएं तो भी इस सदी में तापमान वृद्धि 3.2 डिग्री सेल्सियस तक पहुंचेगी, बशर्ते बहुत असाधारण कार्रवाई ना की जाए। लेकिन गुतारेस ने आशा जताई कि अगर हम वैज्ञानिकों के सुझाए रास्ते पर चलें तो तापमान वृद्धि को डेढ़ डिग्री तक सीमित रखना अभी भी संभव है। गुतारेस अपनी जगह सही हैं लेकिन दिक्कत यह है कि विभिन्न देश अपनी समस्याओं को पूरी धरती के संदर्भ में नहीं देख पा रहे। अपने तात्कालिक हितों को परे रखकर दीर्घकालीन भविष्य के लिए सबके साथ मिलकर चलने का विवेक उनमें पैदा नहीं हो पा रहा। अगर कॉप 25 उनमें एक हद तक भी यह भाव भरने में सफल रहा तो यह उसकी सार्थकता होगी।

कॉप 25 पर्यावरण सम्मेलन

नजरबट्टू

किसकी इज्जत जाती है

चंद्रभूषण

अपने गांव को इतना एकजुट मैंने कभी नहीं देखा। जिन परिवारों की मुलाकात फौजदारी अदालत में पुकार पड़ने पर ही हो पाती थी, वे भी एक ही मुंह से बोलते नजर आ रहे थे। मामला गांव की इज्जत का था, अलग-अलग राय रखने का सवाल ही कहां पैदा होता था? दारोगा ने अपनी साझा बिरादरी का हवाला दिया। कहा कि बात ऊपर तक पहुंच चुकी है, उसकी नौकरी जा सकती है। लड़के बस एक बार थाने में खड़े हो जाएं, उनको बेदाग निकाल कर लाने की जिम्मेदारी उसकी है। लेकिन पूरा गांव अड़ गया कि ऐसा काम हमारे लड़के कर ही नहीं सकते। जो हुलिया औरत बता रही है, वैसे पांच तो क्या एक भी लड़का हमारे यहां नहीं है। दारोगा के हुकुम पर गांव के सारे लड़के बुलाए गए और एक बड़े अहाते में जमीन पर ईंट रख कर बैठी औरत के सामने उनकी शिनाख्त परेड कराई गई। किसी को पहचाना नहीं जा सका क्योंकि दोषी लड़के घटना उजागर होते ही दूर की रिश्तेदारियों में भेजे जा चुके थे।

घटनाक्रम यह था कि गांव के पांच नौजवानों ने बाजार के ठेके पर भांग खरीदी, एक मंदिर में उसे घोटकर पिया, पान खाया और फिर मटरगश्ती करते हुए करीब दो मील दूर अपने गांव की तरफ चले। रास्ते में एक नहर के पास उन्हें बगल के गांव की एक अधेड़ औरत बाजार से कुछ सौदा-सुलफ लेकर लौटती हुई दिख गई। सियारों के झुंड की तरह घात लगाकर लड़कों ने उसे उठा लिया। थोड़ी दूर का ऊसर पार करके एक बंद पड़े ईंट भट्ठे में ले गए और वहां उसके साथ सामूहिक बलात्कार किया। उस स्त्री के पति की मृत्यु हो चुकी थी। खेतों में मजदूरी करके वह अपना परिवार पालती थी। उसके दो छोटे-छोटे बच्चे थे, जिनमें एक मेरे साथ पढ़ता था। गलत काम, बदसलूकी, इसी तरह के शब्द कानों में पड़ते थे। बलात्कार का अर्थ समझना तब मेरे बूते से बाहर था। लेकिन औरत कई दिन बीमार रही, उसका गांव साथ न देता तो वह मर जाती, इतना मुझे पता था।

मेरे गांव में तब शायद ही कोई परिवार ऐसा रहा हो, जिसमें लड़कियां न रही हों। कुछेक तो उनमें शादी लायक भी हो रही थीं। ऐसा हो ही नहीं सकता कि जो बातें उस समय मुझे पता थीं, वे उन तक न पहुंची हों। लेकिन गांव का एक भी जिम्मेदार आदमी इस भयानक घटना को उन लड़कियों और अपने परिवार की इज्जत पर खतरे के रूप में नहीं देख रहा था। पूरा इलाका जानता था कि किस गांव के लड़के गोल बांधकर बाजार में नशा करने जाते हैं और किस-किस ने इस जघन्य कांड को अंजाम दिया है। फिर भी जुटान की जगहों पर लोग मुंडी हिलाते हुए यही कहते सुनाई देते थे- बहुत गलत हुआ है लेकिन लड़कों की जिंदगी बर्बाद नहीं होनी चाहिए और गांव की प्रतिष्ठा पर आंच नहीं आनी चाहिए!

एकदा

ज्ञान का प्रमाण

एक बार सूफी संत रूमी मक्का जा रहे थे। उनके साथ में एक और सूफी संत थे। गर्मियों के दिन थे और यात्रा बेहद कठिन थी। तपते हुए रेगिस्तान में दिन भर चलने के बाद रात में जगह देखकर दोनों आराम करने को रुके। चलते वक्त रूमी को एक रोटी मिली थी। दोनों ने आधी-आधी रोटी खाई और सो गए। कुछ देर बाद रूमी के कान में कुछ आवाज पड़ी। उन्होंने उठकर देखा तो पाया कि साथी संत जोर-जोर से प्रार्थना कर रहे थे। रूमी बड़े खुश हुए कि उनके साथ एक महान संत यात्रा कर रहा है। अगली सुबह दोनों फिर मक्का की ओर चले।

अगली रात दोनों जब नए डेरे पर पहुंचे तो भोजन खत्म हो चुका था। रास्ते में भी किसी ने कुछ नहीं दिया था। लेकिन गनीमत यह थी कि नए डेरे पर पीने को पानी मिल गया। पानी पीकर दोनों संतों ने खुदा को याद किया और सो गए। कुछ देर बाद फिर से रूमी को साथी संत की जोर-जोर से आवाज आने लगी। उठकर उन्होंने देखा कि प्रार्थना कर रहा संत काफी बेचैन है। पहले तो उन्हें लगा कि यह बेचैनी भूख की वजह से होगी, लेकिन प्रार्थना में भूख का कोई जिक्र नहीं आया। अब संत रूमी ध्यान लगाकर साथी संत की पूरी प्रार्थना सुनने की कोशिश करने लगे।

साथी संत प्रार्थना कर रहा था कि वह एक दिन उस देश का राजा बन जाए। यह जानकर रूमी को बड़ा धक्का लगा। उन्होंने प्रार्थना करते साथी से कहा, 'ऐसा लगता है कि गरीबी तुम्हें मुफ्त मिली है, इसीलिए तुम राजा बनने की गुहार लगा रहे हो। अगर तुममें जरा भी ज्ञान होता तो इस तरह से भीख न मांगते। मांगनी ही है तो ज्ञान की भीख मांगो, जो तुम्हें राजा और रंक जैसी भव बाधाओं से पार ले जाएगी।' यह सुनकर साथी संत की आंखें भीग गईं। वह बोला, 'आज आपने मेरी आंखें खोल दीं। मुझे पता चल गया है कि अमीरी ज्ञान का प्रमाण नहीं है।'

संकलन : **गुफरान सिद्दीकी**

और पढ़ने के लिए देखें www.ekda.nbt.in

बलात्कारियों को फांसी देने की रट लगाने की बजाय हमें प्रशासनिक मशीनरी को सुधारने में जुटना होगा

कितने चेहरे उघड़ गए एक बलात्कार से

सुजाता

तेलंगाना की 25 वर्षीय पशु-चिकित्सक के साथ सामूहिक बलात्कार और उसकी हत्या की घटना ने पूरे देश को हिला कर रख दिया। अभिभावक और लड़कियां भय और गुस्से में हैं। उन्हें न्याय, सुरक्षा का आश्वासन और स्त्री होने के उस भय से आजादी चाहिए जो सदियों से उनका पीछा कर रहा है। लेकिन दुखद है कि बलात्कार की ऐसी जघन्य घटनाओं के बाद अक्सर ही मंजर यह होता है कि सरकार में बैठे जिम्मेदार लोगों से लेकर ट्विटर पर बैठे निकम्मे लोग एक समझ से विचित्र बयान और कुतर्क देते हैं और फिर से सिद्ध करते हैं कि एक समाज के तौर पर हम गहराई तक स्त्री-द्वेषी, अविकसित बुद्धि वाले और आत्मघाती हैं।

हिदायतें और नसीहतें

तेलंगाना के मुख्यमंत्री का बयान आया कि औरतों को रात 8 बजे के बाद की ड्यूटी नहीं करनी चाहिए। बलात्कार की किसी भी ऐसी भयानक घटना के बाद कानून-व्यवस्था पर पहली उंगली उठती है लेकिन पुलिस अपनी गलती स्वीकार करने की जगह अक्सर ऊटपटांग बयान देने लगती है। तेलंगाना पुलिस ने औरतों को रेप से बचने के लिए हिदायतें भी जारी कर दीं। पूछना चाहिए कि महिलाओं को पहले से ही क्या कम हिदायतें मिलती हैं? वे तो जन्म लेते ही खुद पर प्रतिबंध लगाना सीखने लगती हैं। पूछा जाना चाहिए कि आखिर औरतें रेप करवाने के लिए तो बाहर नहीं निकलतीं! काम के लिए, या घूमने-फिरने के लिए ही सही, वे बाहर क्यों नहीं निकल सकतीं? रात 8 बजे के बाद उनके लिए सड़कों पर कर्फ्यू क्यों लगा देना चाहिए? पुलिस और समाज कोई एड्वाइजरी मर्दों के लिए क्यों नहीं जारी करते? इसलिए कि औरतों के लिए एड्वाइजरी जारी करते हुए सोचना नहीं पड़ता। लगभग सभी पुरानी या बार-बार कही जाने वाली और कुछेक दकियानूसी बातें हैं। दूसरा, औरतों को नसीहत देना एक सहज और सामान्य बात लगती है।

उतना ही अजीब है जया बच्चन द्वारा संसद में गुस्से में एक की सजा तय करते हुए अनेक के साथ अन्याय करते चलने की वकालत और इसका उन्हें आभास तक न होना। जब चारों ओर बौद्धिक लोग लिंचिंग की घटनाओं की निंदा कर रहे थे तो वह चुप थीं। लेकिन बलात्कार पर बहस में शामिल होते हुए उन्होंने कहा कि बलात्कारी की मॉब-लिंचिंग होनी चाहिए। यह भीड़ के न्याय को वैधता देना है। सरकार, प्रशासन और न्याय-व्यवस्था को जिम्मेदारी,

> किसी का भी यह कहना कि बलात्कारी को पुलिस सुरक्षा में कोर्ट तक ले जाने की जरूरत नहीं, जनता पहले ही न्याय कर दे, एकदम अमानवीय है

नैतिक बोध और जवाबदेही से मुक्त कर देना है। एक सभ्य देश के नागरिकों के बीच क्या ऐसा संदेश दिया जा सकता है? किसी का भी यह कहना कि बलात्कारी को पुलिस सुरक्षा में कोर्ट तक ले जाने की जरूरत नहीं, जनता पहले ही न्याय कर दे, एकदम अमानवीय है।

विक्टिम-ब्लेमिंग किसी भी बलात्कार के बाद का सबसे दुखद पक्ष है। कहा गया कि अगर रेप-पीड़िता ने अपनी बहन की बजाय पुलिस को फोन किया होता, या उसे कराटे आता तो बच जाती। यह एक जायज सवाल है कि जो पुलिस मृतक के घरवालों की एफआईआर तक समय से दर्ज नहीं कर पाई वह किसी लड़की के फोन पर यह बताने पर कि रात हो गई है और उसकी स्कूटी का टायर पंचर है, उसे सुरक्षित घर पहुंचाने आ जाती, उसे यह जवाब न मिलता कि मैडम यह पंचर लगाने की दुकान नहीं है? कराटे सीख लो, मिर्च का स्प्रे रखो, यह करो-वह करो। कहने का मतलब यह कि रेप उतना ही सामान्य है जितना तुम्हारे पीरियड्स। जैसे हमेशा एक सैनिटरी पैड बैग में रखो, वैसे ही बलात्कार से बचने के उपाय। लड़कियों को आत्मरक्षा सिखाएंगे, वह हर हाल में जरूरी है, लड़कों को नहीं सिखाएंगे कि वे मनुष्य बने रहें!

यह मजेदार है कि स्त्री-विरोधी, अश्लील और भद्दे गानों वाली मसाला फिल्मों में काम कर पैसे बनाने वाले बॉलिवुड अभिनेता भी बलात्कार पर कड़े कानूनों की सलाह देते दिखे। बलात्कार कानून में संशोधन 2013 में ही किए जा चुके हैं। मौजूदा कानून इतने सख्त हैं कि अगर पुलिस और कोर्ट अपना काम ठीक से करें तो कोई बलात्कारी बच नहीं सकता। इसमें बलात्कार की तमाम नई व्याख्याएं शामिल की गई हैं और प्रक्रिया में खामियों और देरी के लिए जिम्मेदार अधिकारियों को सजा के प्रावधान किए गए हैं। समस्या कानून में नहीं उसे लागू किए जाने की प्रक्रिया और जिम्मेदार लोगों की मानसिकता में है। हालत यह कि जब मैं यह लेख लिख रही हूं तो खबर आ रही है कि भुवनेश्वर में पुलिस क्वार्टर्स में बलात्कार की घटना हुई है, और यह न तो पहली है न अंतिम।

बलात्कारियों को फांसी देने की रट लगाने की बजाय हमें प्रशासनिक मशीनरी और समाज को सुधारने के प्रयास बढ़ाने होंगे। कानून की दृष्टि से सबसे बेहतर उपाय है बलात्कार के लिए फास्ट ट्रैक अदालतें और तुरंत सजा। साथ ही प्रिवेंटिव उपायों पर युद्धस्तरीय सामाजिक अभियान चलाए जाने की जरूरत है। स्ट्रीटलाइट्स को मुख्य चौराहों से गलियों-नुक्कड़ों तक पहुंचाना और पुलिस बल में महिलाओं की बड़े पैमाने पर भर्ती करके वीमेन सेल को मजबूत और प्रभावी बनाया जाना चाहिए। हेल्पलाइनों का विस्तार किया जाना चाहिए और जेंडर सेंसिटाइजेशन प्रोग्राम चलाकर उन्हें महिलाओं की आपातकालीन आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील किया जाना चाहिए।

अहंकार के साथ

बलात्कारी पैदा नहीं होते, बनाए जाते हैं। उन्हें बचपन से ही इस अहंकार के साथ बड़ा किया जाता है कि स्त्री का जन्म पुरुष के लिए हुआ है। हर दुर्घटना पर कहा जाता है कि लड़कियों का कसूर था कि वे गलत समय पर निकली थीं, कम कपड़ों में थीं या ऐसा ही कुछ भी। बलात्कारी को बधिया करने से बेहतर है पुरुष-केंद्रित सोच से निजात पाई जाए। ऐसा जाग्रत समाज बनाना होगा जो एक अकेली लड़की को इंडिया गेट पर विरोध में बैठा देख वहां से गुजर न जाए बल्कि उसकी तख्ती अपने हाथ में लेकर साथ बैठ जाए, जिस पर लिखा था- मैं इस देश में सुरक्षित क्यों नहीं हूं?

Arvind Sharma

जयपुर में मेडिकल छात्राओं का विरोध प्रदर्शन

सोशल मीडिया की तमीज सिखाने वाली पहल

यूजीसी द्वारा नई पीढ़ी को सोशल मीडिया का शिष्टाचार सिखाने की पहलकदमी से यहां सक्रिय लोगों के व्यवहार को उपयुक्त दिशा मिलने की संभावना जगी है

नरपत दान बारहठ

यूजीसी ने हाल में देश भर में चलने वाले स्नातक के पाठ्यक्रम में सोशल मीडिया की नैतिकता और शिष्टाचार विषय को शामिल करने का फैसला किया है। देश की करीब पैंसठ फीसद युवा आबादी का सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर कब्जा है। ऐसे में इसके दुरुपयोग को देखते हुए उसके बारे में युवाओं को जागरूक करने के लिए इस तरह के पाठ्यक्रम की आवश्यकता बड़ी शिद्दत से महसूस की जा रही थी।

वैसे तो सोशल मीडिया की अपनी सहूलियतें हैं। इससे जहां सूचनाओं का आदान-प्रदान आसान हुआ है, वहीं हमारी जीवन शैली भी सहज हुई है। लेकिन निरंतर बढ़ती उपयोगिता के साथ-साथ स्वार्थी तत्वों द्वारा इसका दुरुपयोग भी लगातार बढ़ता जा रहा है। सोशल मीडिया को कुछ लोगों ने दुष्प्रचार का माध्यम बना लिया है जिसके कारण फर्जी और नफरत फैलाने वाली खबरों की एक अलग ही दुनिया बन गई है। इसका असर आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दिखना शुरू हो गया है। इससे छात्र ही नहीं, सामान्य नागरिक भी प्रभावित हो रहे हैं।

सबसे डरावना पहलू यह है कि सोशल नेटवर्किंग से जितना विचारों का आदान-प्रदान हो रहा है, उससे कहीं अधिक आपसी टकराव और विवाद पैदा हो रहे हैं। फेसबुक और वाट्सऐप आदि पर झूठ और तथ्यहीन बातें अधिक आ रही हैं। शब्दों के चयन पर ध्यान नहीं दिया जा रहा। एक-दूसरे पर विचारों को थोपने की कोशिश की जा रही है। अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है। महापुरुषों की कृतियों पर आपत्तिजनक विडियो व फोटो डाले जा रहे हैं। जाति-नस्ल आदि के आधार पर भी टिप्पणी करके लोग समाज को दूषित करने की कोशिश कर रहे हैं।

इसका बड़ा प्रभाव आज की युवा पीढ़ी पर पड़ रहा है। नई पीढ़ी डिजिटल सिस्टम में ऐसी ही टिप्पणियां देख रही है। नतीजा यह कि उसके लिए सही और गलत में फर्क समझना पहले के मुकाबले और मुश्किल हो गया है। विचार प्रकट करने की आजादी को हर व्यक्ति के लिए संभव बनाने वाला यह मंच विचार अभिव्यक्ति और आपसी संवाद को और कठिन बनाता जा रहा है। सोशल मीडिया पर दिखने वाला यह उच्छृंखल व्यवहार वास्तविक दुनिया में हमारे व्यवहार को भी अछूता नहीं रहने दे रहा।

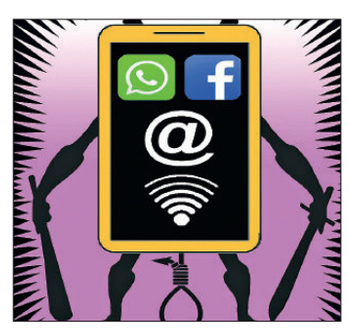
कॉमन रूम

यही नहीं, इस प्लेटफॉर्म पर अशिष्ट लोगों के संगठित समूह भी सक्रिय रहते हैं, जिनके लिए 'ट्रोलर' शब्द गढ़ा गया है। ये ट्रोल करने वाले किसी मुद्दे पर चल रही चर्चा में कूदकर आक्रामक और अनर्गल प्रतिक्रिया देते हैं। इनका मकसद ही होता है गाली-गलौज और अश्लील धमकियों के जरिए किसी स्वस्थ आलोचना का मुंह बंद करना। लोकतांत्रिक बहस को बंद करने की कोशिशों में कथित ट्रोल सेना इतनी आगे है कि सोशल मीडिया का सर्वसुलभ मंच भी निरर्थकता की ओर बढ़ता दिखने लगा है। यह कहना अनुचित नहीं है कि जो लोग समाज में अपना वजूद साबित नहीं कर सकते या जो असामाजिक प्रवृति के हैं या फिर सामाजिक उपेक्षा का शिकार हैं, ऐसे ही लोग ट्रोल आर्मी का हिस्सा बन सोशल मीडिया पर सक्रिय होते हैं।

बहरहाल, इनसे निपटने और सोशल मीडिया को एक स्वस्थ, लोकतांत्रिक मंच के रूप में बरकरार रखने का उपाय यही है कि यहां सक्रिय लोगों के व्यवहार को उपयुक्त दिशा दी जाए। अब तक इसके लिए नए नियम-कानून बनाने जैसे कदमों पर ही चर्चा हो रही थी, मगर यूजीसी के इस कदम ने नई पीढ़ी में शिक्षा के जरिए इस लक्ष्य को हासिल करने की संभावना जगाई है। इसमें दो राय नहीं हो सकती कि सोशल मीडिया पर गैरजिम्मेदार व्यवहार के पीछे की बड़ी वजह सही शिक्षा का अभाव ही है। युवाओं को सही शिक्षा मिल जाए, उन्हें खुद को ठीक से व्यक्त करना सिखा दिया जाए तो उनकी सोच भी सकारात्मक होने लगेगी। सहज विचार-विनिमय आसान होगा तो एक-दूसरे को समझना भी आसान होगा। कुल मिलाकर, इसके नतीजे तो काफी हद तक अमल के तरीकों पर निर्भर करते हैं, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि यूजीसी ने सही दिशा में एक कदम उठाया है।

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

www.speakingtree.nbt.in

चारदीवारी में बंधा विचार सत्य को नहीं छू सकता

आचार्य रूपचंद्र

संसार का हर व्यक्ति कामयाबी पाने के लिए बेचैन है। जो जिस भी क्षेत्र में है, वह अपनी पहचान कायम करना चाहता है। यह बेचैनी स्वाभाविक है। मुश्किल यह है कि आगे जाने की कोशिश में बहुत कुछ पीछे छूटता चला जाता है। आप चाहें भी तो उसे पकड़कर नहीं रख सकते। पकड़ने का मतलब है कि आपको वहीं ठहर जाना पड़ेगा। तब आप ही समय से पीछे छूट जाएंगे।

छूटा तो था राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर का भी। राम वनवास गए तो घर परिवार, राजपाट पीछे छूट गया। कृष्ण आगे बढ़े तो देवकी-वासुदेव, नंद-यशोदा, राधा, बलराम, सुदामा छूट गए। बुद्ध और महावीर साधना के पथ पर आगे बढ़े तो उनसे भी बहुत कुछ पीछे छूट गया। ध्यान दें, एक भी ऐसा आख्यान नहीं है कि इनमें से कोई भी अवसाद में गए हों। वे आनंद के साथ अंदर और बाहर की दुनिया की दूरी को तय करते रहे।

यह छूटना, दरअसल छूटना नहीं है। यह त्याग है। त्याग निश्चित तौर पर हमेशा सुपरिणाम लाता है। राम हो या कृष्ण, बुद्ध हो या महावीर, ये हमेशा जाग्रत अवस्था में रहते थे। यह अवस्था कल्याण और निर्माण की होती है। अगर हम भी मनुष्यता की परवाह करते हुए आगे बढ़ते हैं तो समझिए कि हम जागे हुए हैं। यह जागना एक तरह की आत्म-दृष्टि है। इसके आते ही न केवल मन के विकार नष्ट होते हैं बल्कि दुखों का भी अंत होता है। परमात्मा तक पहुंचने का भी यह एक सुगम मार्ग है।

भगवान महावीर ने विशेष जोर देकर कहा था, 'सुत्तेसु यावि पडिबुद्ध जीवी, न वीससे पंडिए आसुपन्ने।' अर्थात 'सारा संसार मोह-निद्रा में सो रहा है। सौभाग्य से तुम जाग गए हो। तुम्हें आत्म-दृष्टि मिली है, किंतु सारे संसार को सोया हुआ देखकर तुम वापस सो मत जाना।' अगर हम महावीर के संकेत को समझ सकें तो तय मानिए कि जीवन का हर अनुभव हमें सिद्धि की तरफ ले जाने में मदद करेगा। हम अपने लिए या संसार के लिए जो कुछ अच्छा पाना चाहते हैं, उसमें कामयाबी मिलेगी। बस अपने अनुभवों को सहलाने, संभालने और सुपरिणामों को समझने का गुर आना चाहिए। विश्व प्रसिद्ध कवि पाब्लो नेरुदा ने लिखा है कि उन्होंने किसी पुस्तक से कविता लिखने का गुर नहीं सीखा। जीवन के गहन अनुभवों ने उन्हें सूझ दी है। इसलिए तो वे कहने का साहस रखते हैं, 'जियो आज, जीवन रचो आज/ उठाओ आज जोखिम/ मत दो मरने खुद को आज धीरे-धीरे/ मत भूलो खुश रहना।' खुश रहना हमारी शुभ भावना का द्योतक है जो संकल्प और सत्कर्म का विचार देता है।

यह भी याद रखें कि जो विचार अपने को चारदीवारी में बांध लेता है वह कभी पनप नहीं सकता। जैसे बंधा पानी सागर तक नहीं पहुंच सकता, वैसे ही बंधा हुआ विचार सत्य को नहीं छू सकता। पानी चलता रहे तो सागर बन जाता है। विचार गतिशील रहे तो सत्य बन जाता है। सागर की अनंतता के सामने खड़े होने पर कुएं की क्षुद्रता स्वयं टूट जाती है, किंतु उसके दर्शन तभी संभव हैं जब कुएं का आग्रह टूटे। मन में जिज्ञासा उभरे, इसके लिए जरूरी है कि हम कहीं भी अपने को बांधें नहीं। तब खुद ही महसूस करेंगे कि कामयाबी पाने की बेचैनी आत्म-दृष्टि में विलीन हो रही है। पीछे जो कुछ छूट रहा है, वह आपसे मिलने के लिए बेचैन है, लेकिन हर हाल में जागते रहना जरूरी है।

प्रस्तुतिः **रुचि आनंद**

विपक्ष की नई पिच और सरकार की प्रैक्टिस

नरेन्द्र नाथ

मौजूदा संसद सत्र हाल के वर्षों के तमाम सत्रों से कई मायनों में अलग है। इस बार विपक्ष सरकार की आर्थिक नीतियों पर अधिक हमलावर है और इस मुद्दे पर संसद के दोनों सदनों में सरकार से जवाब मांगने और बहस कराने में भी सफल रहा। उसने भावनात्मक मुद्दों से खुद को पूरी तरह अलग रखा। अयोध्या मसले पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला आने के तुरंत बाद हो रहे इस सत्र में इससे जुड़ा कोई मसला नहीं उठाया गया। यह विपक्ष का बीजेपी से निपटने के लिए नया रास्ता तलाशने का संकेत लग रहा है, लेकिन सबसे बड़ा सवाल है कि क्या विपक्ष इसे बरकरार रख पाएगा? बार-बार मात खाने के बाद विपक्ष अब अच्छी तरह समझ चुका है कि बीजेपी से वह भावनात्मक लड़ाई में मुकाबला नहीं कर सकता है। विपक्ष ने बीजेपी के राष्ट्रवाद और हिंदूवाद को पहले मंडल 2.0 के सहारे काउंटर करने की कोशिश की। लेकिन वह दांव उल्टा पड़ा और मोदी-शाह की अगुवाई के चलते विपक्ष सोशल इंजीनियरिंग में काफी पीछे हो गया। इसके बाद आर्थिक और किसानों से जुड़े मुद्दे पर ही टिके रहना विपक्षी दलों के लिए मजबूरी बन गई। अब लगभग सभी दल आम सहमति से बीजेपी की मजबूत पिच से खुद को अलग करने की कोशिश कर रहे हैं। दिल्ली में अरविंद केजरीवाल से लेकर पश्चिम बंगाल में ममता बनर्जी तक, सभी सिर्फ स्थानीय मुद्दों पर ही बात करने में लगे हैं। विपक्ष के एक सीनियर नेता ने एनबीटी से बातचीत में स्वीकार किया कि असहिष्णुता और लिंचिंग जैसे संवेदनशील मुद्दों को उठाने का नुकसान ही हुआ। संसद में विपक्षी दलों ने कई मौकों पर इन मुद्दों को उठाया और हर बार विपक्ष का दांव उलटा ही पड़ा। इसके बाद संसद के मौजूदा सत्र में विपक्ष ने अपना पूरा फोकस आर्थिक मुद्दों पर रखा और इन्हीं विषयों के इर्द-गिर्द सरकार को घेरने की कोशिश भी की। कांग्रेस की 14 दिसंबर को दिल्ली में होने वाली रैली भी इसी मुद्दे पर है। क्षेत्रीय दल भी अब बीजेपी के राष्ट्रीय मुद्दों को इग्नोर करके स्थानीय और आर्थिक मुद्दों की बात करने लगे हैं।

विशुद्ध राजनीति

कसौटी

आर्थिक मुद्दों पर घेरेबंदी

विपक्ष की चिंता है कि कैसे वह आर्थिक नीतियों पर सरकार को लगातार घेरे रहे। अभी मोदी सरकार के दूसरे टर्म के महज 6 महीने ही हुए हैं। जाहिर है, सरकार के पास आर्थिक सुस्ती को दूर करने के लिए पर्याप्त समय है। अगर अगले दो-तीन सालों में मोदी सरकार बिगड़ते आर्थिक हालात को काबू करने में सफल होती है तो विपक्ष एक बार फिर मुद्दाविहीन हो जाएगा और तब उसके पास पूरी तरह सरेंडर करने के अलावा कोई उपाय नहीं बचेगा। राजनीति के इस दौर में मोदी-शाह की अगुआई वाली बीजेपी नैरेटिव को अपने हिसाब से बदलने के खेल की माहिर खिलाड़ी साबित हुई है। नियमित अंतराल पर वह हमेशा ऐसा करने में सफल भी रही है। 2014 आम चुनाव में जीत के बाद जब उसे दिल्ली और बिहार में हार मिली और विपक्ष ने उसे सूट-बूट सरकार की छवि में कैद करने की कोशिश की, तभी जेएनयू की घटना हो गई और बीजेपी को दूसरा मुद्दा मिल गया। उसके बाद तो कभी राष्ट्रवाद, फिर कुछ महीनों बाद नोटबंदी, सर्जिकल स्ट्राइक, तीन तलाक, एयर स्ट्राइक, अनुच्छेद 370 और राम मंदिर जैसे मुद्दों से बीजेपी लगातार अपने पक्ष में माहौल बनाती रही है। अगर ट्रेंड देखें तो 6 महीने के अंतराल पर बीजेपी एक बड़े मुद्दे से हटकर दूसरे मुद्दे पर फोकस शिफ्ट करने में सफल हो जा रही है। अभी जब राम मंदिर और 370 पर बहस रुकने का संकेत भर मिला तो बीजेपी पूरे देश में एनआरसी लागू करने का ऐलान करके 2024 की पिच तैयार करने में जुट गई है। इसके अलावा धर्मांतरण, कॉमन सिविल कोड और जनसंख्या नियंत्रण जैसे मुद्दों पर आगे बढ़ने के भी संकेत भी दे दिए हैं। मतलब बीजेपी का होमवर्क तैयार है और बस उचित समय पर वह प्रभावी तरीके से इसे लोगों के बीच लाएगी।

चक्रव्यूह तोड़ने को तैयार

मंगलवार को ही पार्टी की मीटिंग में सभी सांसदों से कह दिया गया कि पार्टी एनआरसी को बड़ा मुद्दा बनाएगी और नागरिकता संशोधन कानून किस तरह से हिंदू नागरिकों को सुरक्षा कवच देगा। पार्टी इसे अगले कुछ सालों के लिए सबसे बड़ा मुद्दा मान रही है और खासकर बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में बड़ा सियासी लाभ पाने की उम्मीद में है। हालांकि इनके बीच चिंता की बात सिर्फ यह है कि अभी पिछले महीने हरियाणा और महाराष्ट्र में ऐसे समय विधानसभा चुनाव हुए जब अनुच्छेद 370 और राम मंदिर का मुद्दा एकदम गरम था। इसके बावजूद इन चुनावों में पार्टी को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। झारखंड में पार्टी इन मुद्दों के अलावा पूरे देश में एनआरसी कराने के वादे के साथ उतरी है। जाहिर है कि यह परिणाम स्पष्ट करेंगे कि इन मुद्दों से कितना कारगर सियासी प्रीमियम मिलेगा। लेकिन इन मुद्दों के बीच बीजेपी को पता है कि वह आर्थिक मुद्दों को अब और अधिक दिनों तक इग्नोर नहीं कर सकती है। यही कारण है कि पार्टी समानंतर तरीके से इन मुद्दों पर भी फोकस कर रही है और जनता के बीच संदेश देने के लिए खास अभियान भी चला सकती है।

पार्टी ऐसा नहीं चाहेगी कि लोग यह मानें कि वह ऐसे मुद्दों को दरकिनार कर भावनात्मक मुद्दों पर ही राजनीति करना चाहती है। जानकारों के अनुसार इस पर अधिक फोकस करने से यह मजबूती से अधिक मजबूरी दिख सकती है। साथ ही बीजेपी को यह भी लगता है कि राष्ट्रवाद और हिंदुत्व जैसे मुद्दे वोटरों को एक मंच पर लाने का जरिया मात्र हैं और सिर्फ उनके भरोसे चुनाव नहीं जीते जाते। गरीबों के लिए किए काम को बीजेपी अपने पक्ष में बड़ी बात मानती है। बीजेपी के अनुसार गरीब एक ऐसा वोट बैंक बना, जिससे जातियों की दीवार टूटी और उसे बड़ा सियासी लाभ मिला। ऐसे में किसी एक मुद्दे के नजरिए से आकलन करना सही नहीं होगा।

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

ठोस कदम उठाए सरकार

3 दिसंबर को प्रकाशित संपादकीय 'बर्दाश्त से बाहर' पढ़ा। सवाल है कि अगर सरकार रातोंरात अनुच्छेद 370 हटा सकती है, राष्ट्रपति शासन हटा सकती है, तीन तलाक बिल पास करा सकती है तो रेप पर अंकुश लगाने के लिए ठोस कदम क्यों नहीं उठा सकती? रेप के खिलाफ कानून ऐसा बने जिससे लोगों में डर हो। हमें बुलेट ट्रेन नहीं चाहिए, हमें पहले सुरक्षा चाहिए। नेता हमेशा नारे लगाते हैं कि बेटी बचाओ, देश बचाओ। लेकिन अगर वे हमारी सुरक्षा के इंतजाम नहीं कर सकते तो उनको अपनी सुरक्षा पर पैसा खर्च करना बंद कर देना चाह

Join Teligram Channel ⤵

🎯 TARGETGOVTJOBS [*Https://t.me/TargetGovtJobs*]

Special :- Daily Update 👉 📰 Newspaper, ✍ Editorial, 📅 Today's History, 📻 Air & BBC News, 📺 RSTV, 📖 The Hindu vocabulary, ☆ Imp. NewsClips, 📺 StudyIQ Video, 📅 Daily, Weekly & Monthly current affairs Magazine, 🔊 Dr. Vijay Agarwal Audio Lectures, 💻 Job update [Employment News Weekly], etc...

📚E BOOKS📚 [*Https://t.me/Edu_Books*]

Special :- Get all important E-Books [NCERT Books, Subject Wise Books, Hand Written notes, Coaching Classes Notes], Weekly & Monthly Current Affairs Magazine, Exam Test Series, Job update, Employment News, Other Magazine etc.... [Medium :- Hindi & English]

📰E-PAPER & MAGAZINE 📰 [*Https://t.me/NewspapersTodaY*]

Special :- Daily Update Newspaper [Hindi & English Language], Magazine, Employment News, Job update, 📻 Air & BBC News, Etc....

🙏 THANKS 🙏